सिद्ध योग

संस्थापक संरक्षक एवं सम्पादक

योगयोगेश्वर अनन्तश्री चन्द्रमोहन जी महाराज

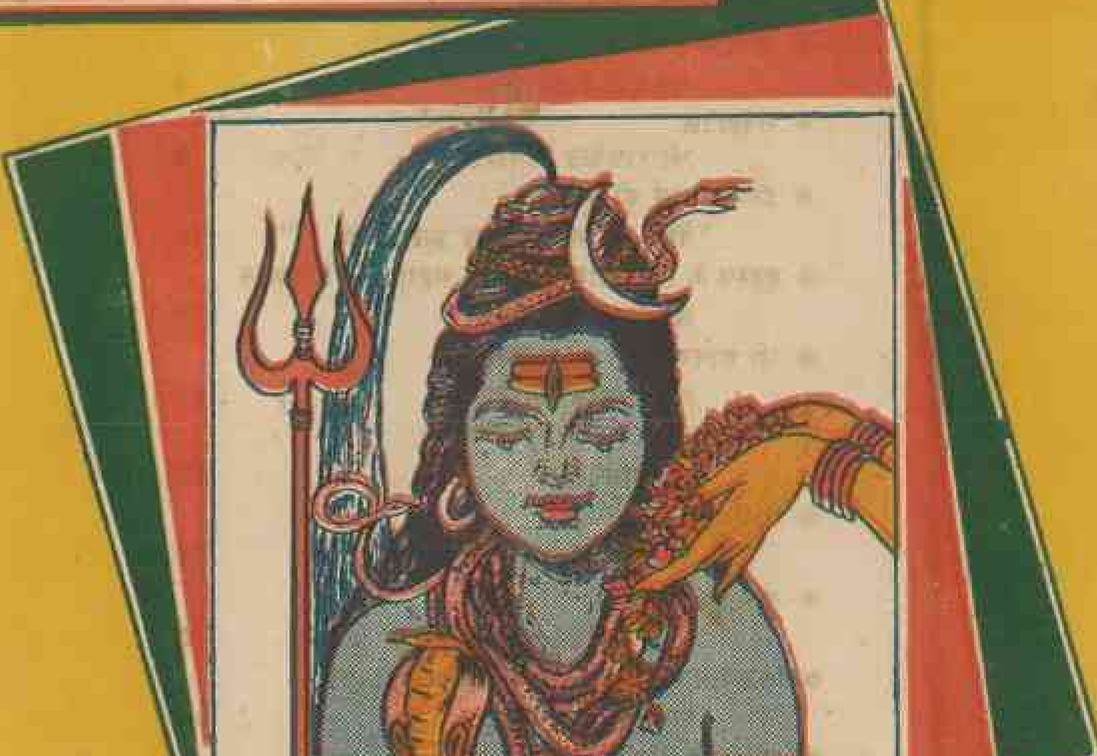

वर्ष १३
अंक १२
मार्च ८१

श्री सिद्ध गुफा प्रकाशन
सैंवाई, आगरा

इस अंक में—

प्रकाशक
श्री सिद्धगुफा, सवाई

- त एव भुवि मानवाः
- विशुद्ध मनसो नन्दन्ति योगीश्वराः (विशेष लेख)
  योगयोगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जो महाराज २
- जो चाहो कल्याण
  श्री रमेशकुमार ४
- साधकों के प्रश्न तथा उनके उत्तर
  श्री गुरुदेव जी द्वारा ५
- सदोपदेश
  श्री राघवेन्द्र तिवारी ६
- इस्लाम धर्म की कुछ बातें
  प्रेषक श्री मानिकचन्द ऊमर वैश्य १०
- गृहस्थ के लिए आवश्यक पंच महायज्ञों का विधान
  श्री हीरालाल शास्त्री १४
- श्री ज्ञानचन्द जी को जीवन दान
  श्री रामसजीवनसिंह १७
- मोतिया बिन्द का प्राकृत उपचार
  श्री साधनानन्द २१
- निजानुभूतियां
  श्री महेन्द्रनारायणसिंह २५
- योग चिकित्सा
  श्री गिरीशदेव वर्मा २९
- सिद्धयोग में सिद्धानुशासन की अपरिहार्यता
  डा० श्री विजयसिंह ३३
- शक्तिपीठ और सिद्धपीठ
  श्री केशव उपाध्याय ३६
- कर्माशय मीमांसा
  आचार्य श्री चन्द्रहास शर्मा ४०
- पत्रम्-पुष्पम्-फलम्-तोयम् ४७

संयुक्त सम्पादक
'दिव्य'

वार्षिक मूल्य : १५ रुपया अगले वर्ष का १८ रुपया

श्री सद्गुरु परब्रह्मणे नमः   ॐ   श्री रामलाल प्रभवे नमः

श्री सिद्धगुफा-सवांई का

योग-महामेला

तथा

❀ महाप्रभु श्री रामलाल जी की पावन जयन्ती ❀

सभी गुरु-भाई-बहनों को यह जानकर परम हर्ष होगा कि श्री सिद्धगुफा सवांई का वर्षिक योग-महामेला चैत्र शुक्ला सप्तमी, अष्टमी, नवमी वार शनि, रवि सोम, दिनांक ११, १२, १३ अप्रैल १९८१ को बड़ी धूम-धाम से मनाया जा रहा है। श्री गुरुदेव जी की ओर से छपे हुए निमंत्रण पत्र आप सबको भेजे जावेंगे ही, फिर भी यदि किसी को निमंत्रण-पत्र न भी मिले तो भी सपरिवार व इष्ट-मित्रों सहित सभी को इस पावन समारोह में सम्मिलित होकर धर्म-लाभ लेने का प्रयत्न करना चाहिए।

विशेष रूप से सभी आगन्तुक भाई-बहनों को मौसम के अनुकूल अपने-अपने बिस्तर अवश्य साथ लाना चाहिए। क्योंकि आश्रम की ओर से सभी को बिस्तर देना सम्भव नहीं हो सकता। आगन्तुक महानुभावों को इस सूचना का विशेष ध्यान रखना चाहिए। निवेदक :—

स्वागत-समिति, श्री सिद्धगुफा योग-महामेला
योग-प्रशिक्षण-केन्द्र श्री सिद्धगुफा
सवांई (आगरा)

सिद्ध योग

वर्ष १३
अङ्क १२

मार्च
१९८१

ध्यायं ध्यायं यदिह परमं ब्रह्म शुद्ध स्वभावम्,
मर्त्यो मृत्योर्मुख विवरतो, मुक्ति माप्नोति सद्यः ।
तत्प्राप्त्यर्थान् बहुविशदं योगशास्त्रोपदेशान्,
कल्याणानां भवतु महतां सिद्धये 'सिद्धयोगः' ॥

❀ त एव भुवि मानवाः ❀

यज्जीवितं चाचिरांशुसमानं क्षणभंगुरम् ।
तच्चेद्धर्मकृते याति यातु दोषोऽस्ति को ननु ॥
जीवितं च धनं दारा पुत्राः क्षेत्रं गृहाणि च ।
याति येषां धर्मकृते त एव भुवि मानवाः ॥

अर्थात्

जीवन बिजली की चमक के समान क्षणभंगुर है। वह यदि धर्म-पालन के लिए चला जाता—नष्ट हो जाता है, तो हो जाय, इसमें क्या दोष है। जिनके जीवन, धन, स्त्री, पुत्र, खेत और घर धर्म के काम में चले जाते हैं, वे ही इस पृथ्वी पर मनुष्य कहलाने के अधिकारी हैं।

हमारा विशेष लेख—

विशुद्ध मनसो नन्दन्ति योगीश्वराः

● योग योगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज

विशुद्ध अन्तःकरण वाले योगिराज ही परमानन्द की प्राप्ति कर पाते हैं, इस परम सत्य का समर्थन संस्कृत साहित्य के उद्भट कवि और परम योगी श्री भर्तृहरि महाराज ने अपने लोक प्रसिद्ध शतक त्रय के वैराग्य शतक नामक खण्ड में इस प्रकार किया है—

आशा नाम नदी मनोरथ
जला तृष्णातरङ्गाकुला ,
रागग्राहवती वितर्क-
विहगा धैर्यद्रुमध्वंसिनी।
मोहावर्तसुदुस्तराऽतिगहना
प्रोत्तुङ्गचिन्तातटी ,
तस्याःपारगता विशुद्ध-
मनसो नन्दन्ति योगीश्वराः।

अर्थात् इस संसार में आशा नाम की नदी प्रवाहित हो रही है जिसमें मनोरथ रूपी जल भरा हुआ है, तृष्णा रूपी बड़ी-बड़ी लहरें उठती रहती हैं, राग-द्वेष रूपी घड़ियाल और मगरों का जिसमें आवास है, तर्क-वितर्क रूपी पक्षी क्रीड़ा करते रहते हैं, नदी का प्रबल प्रवाह धैर्यरूपी वृक्ष को गिराता रहता है, तथा मोहरूपी भँवरों ने इसे और भी विकराल बना दिया है। बड़ी-बड़ी चिन्तायें इसके ऊँचे-ऊँचे तट हैं। फिर भी ऐसी भयंकर और दुर्गम नदी को विशुद्ध मन और अन्तःकरण वाले योगी निर्वाध रूप से पार करके आनंद को प्राप्त होते हैं।

बड़े ही सुन्दर रूपक में योगिराज भर्तृहरि ने जग-जीवन की दुरूहता और जटिलताओं का चित्रण हमारे सामने रखा है। मनुष्य आखिर आशारूपी पाशों में ही तो बँधा हुआ है। मनोरथ और आशाओं की तरंगों का ही दूसरा नाम तो चित्त की वृत्तियां हैं। योग-दर्शनकार कहते हैं कि इन्हीं अगणित और असंख्य चित्त वृत्तियों का निरोध कर लेना ही योग है और जो चित्त की वृत्तियों को रोकने में सफल हो जाता है वही योगी और सिद्ध-योगी की पदवी पा जाता है। तृष्णा की तरंगों से उद्वेलित, राग-द्वेष के मगर-मच्छों से पूर्ण तर्क-वितर्क के बहुरंगे-विहंगों से भयावनी बनी इस ऊँचे-ऊँचे चिन्तातटों से घिरी हुई सर्व नाशिनी नदी को वे कदापि पार नहीं

कर सकते जो योगी नहीं हैं। भोग और आसक्ति वृत्ति वाले व्यक्ति तो इसे पार करने का कदापि साहस नहीं कर सकते। यदि कर भी डालते हैं तो सफल मनोरथ नहीं हो पाते, वे इसकी प्रबल तृष्णा-तरंगों और मोहावर्त में पड़कर ऐसे बह जाते हैं कि फिर जन्म-जन्मान्तर तक इससे निकल कर बाहर आने का अवसर ही नहीं प्राप्त कर पाते। प्रतिकूल इसके वे योगिराज जिन्होंने अपनी समूची चित्त-वृत्तियों को भौतिक जगत से मोड़कर प्रभु चिन्तन अथवा ब्रह्म साक्षात्कार की ओर लगा दिया है, यम और नियम के महाव्रत जिनके आचारण में अपना गहरा स्थान बना चुके हैं, धारणा, ध्यान और समाधि जिनका सहज स्वभाव बन चुका है वे इसे सरलता से पार करके उस लोक में जा पहुँचते हैं जहां आनन्द ही आनन्द है। ऐसे योग-परायण मनस्वी संसार में रहते भी हुए सांसारिक बाधाओं से अलिप्त रहते हैं। देह रखते हुए भी वे महाराजा जनक की भांति विदेह कहलाते हैं और अपने इस जीवन में ही वे ब्रह्म के साक्षात्कार का सुअवसर पा लेते हैं।

योगिराज भर्तृहरि का उपर्युक्त श्लोक संसार की उलझनों और विषमताओं से संघर्ष करके उन्हें पद दलित करके साधक को अपने ध्येय की ओर अविराम गति से आगे बढ़ने का जहां परामर्श देता है वहां दूसरी ओर उससे साधक को यह सत्परामर्श भी प्राप्त होता है कि बिना योग-साधना के उसमें यह शक्ति और साहस आ ही नहीं सकता, जिसको आधार बना कर वह इस विविध विषमताओं, अवरोधों से भरी हुई नदी को पार करके परमानन्द की प्राप्ति कर सके। अतः प्रत्येक योग-प्रेमी को सफल और शक्ति सम्पन्न योगी बनने के लिए सतत साधना करनी चाहिए।

योगिराज भर्तृहरि ने अपने वैराग्य शतक में और भी अनेक स्थलों पर योगमार्ग अपनाने का परामर्श मानव मात्र को दिया है। उन्होंने कहा है कि सांसारिक भोग चमकती बिजली के समान अस्थिर हैं। आयुष्य वायु द्वारा तितर-बितर किये गये पानी बरसाने वाले मेघों की नाईं क्षण भंगुर है जवानी की उमंग की तरंगें भी अस्थायी और क्षण-भंगुर हैं। कोई वस्तु यहां सदा टिकने वाली नहीं है। इसलिए हे विचार-शील पुरुषो ! तुम्हें धैर्यपूर्वक की गई समाधि साधना तथा सुलभ योग में मन लगाना चाहिए। वे कहते हैं—

भोगा मेघवितानमध्य-
विलसत्सौदामिनीचञ्चला।
आयुर्वायुविघट्टिताभ्रपट-
लीलानाम्बुवद्भंगुरम्।
लोला यौवनलालसास्तनु
भृतामित्याकलय्य द्रुतं।
योगे धैर्यसमाधिसिद्धिसुलभे
बुद्धिं विदध्वं बुधाः॥ ✡

❋ जो चाहो कल्याण ❋

❋ श्री रमेशकुमार राजोरिया, अजान, दतिया

ध्यान लगाओ गुरु चरणों में, जो चाहो कल्याण ।
गुरु से बढ़कर कोई नहीं है, गुरु की शक्ति महान ।
ये है गुरु गीता का ज्ञान , गुरु गीता का ज्ञान ॥

तुलसी मीरा और सूर ने, सबको यही बताया ।
दास कबीर ने गली-गली में, गुरू तत्त्व प्रकटाया ॥
ऋद्धि-सिद्धि सब किन्नर नर ने, गुरु को शीश झुकाया ।
गुरु सेवा ही परम तीर्थ है, आदि देव समझाया ॥
ब्रह्म शक्ति है गुरु के मुख में, सब ही करें बखान ।
ये है गुरु गीता का ज्ञान ॥

गुरु वाणी ही मूल मन्त्र है, वेद शास्त्र सब गाते ।
गुरु के चरण पकड़ कर , पापी नर भी भव तर जाते ॥
सिद्ध महात्मा और देवता , गुरु का ध्यान लगाते ।
ऋषि मुनि योगी और तपस्वी , गुरु का पार न पाते ॥
ज्ञान मूर्ति दूजा नहिं कोई , कहते सकल पुराण ।
गुरु से बढ़कर कोई नहीं है , गुरु की शक्ति महान ॥

रामलाल प्रभुजी ने सबको , सुख का आधार बताया ।
चन्द्रमोहन गुरुजी ने सब , 'अजान' को गले लगाया ॥
राम सुमर के, रहम किया ना, उसने सुख ना पाया ।
कृष्ण सुमर के कर्म न कीन्हा, फल कुछ भी ना आया ॥
कर्म-योग में कृष्णचन्द्र ने , मुख से किया बखान ।
कर्म किये जा फल की इच्छा , मत कर रे नादान ॥
जैसा कर्म करोगे वैसा फल देगा भगवान ।
ध्यान लगाओ गुरु चरणों में , जो चाहो कल्याण ।
गुरु से बढ़कर कोई नहीं है , गुरु की शक्ति महान ॥

साधकों के प्रश्न तथा उनके उत्तर

(श्री सद्गुरुदेव जी द्वारा)

प्रश्नः—परम पूज्य गुरुदेव ! कृपा करके यह बतलाइये कि–योग के कितने प्रकार हैं और उनमें से कौन सा श्रेष्ठ है ?

उत्तरः—प्रिय वत्स ! अधिकारी भेद से योग चार प्रकार का होता है—हठयोग, राजयोग, मन्त्रयोग और लययोग। इनमें जो जिसका अधिकारी हो उसके लिये वही साधना श्रेष्ठ है। मन्त्रयोग इन सबमें सरल है। इसकी साधना योग के उत्तम, मध्यम और अधम तीनों श्रेणी के साधक कर सकते हैं। अतः इसी का दूसरा नाम सहजयोग भी है।

प्रश्नः—हे गुरुदेव ! हठयोग किसे कहते हैं और उसका अधिकारी कौन होता है ?

उत्तरः—हे पुत्र ! सुनो ध्यानाभ्यास एवं मन्त्रजाप की सहायता से मन पर संयम करते हुए समाधि प्राप्ति करना राजयोग कहलाता है किन्तु बलपूर्वक प्राणों पर संयम करना हठयोग कहलाता है।

हठयोग का अधिकारी कौन हो सकता है, इस सम्बन्ध में भगवान सदाशिव ने 'शिव-संहिता' में कहा है:—

जो व्यक्ति अत्यन्त वीर्यवान हो, धैर्यवान हो, उत्साह सम्पन्न हो, परम वैराग्यवान एवं संयमी हो वही व्यक्ति हठयोग का अधिकारी है। ऐसे व्यक्ति को ही हठयोग में प्रवेश करना चाहिए और गुरुदेव के मार्ग दर्शन में ही अपना अभ्यास करना चाहिए। जो व्यक्ति दूसरों की देखादेखी स्वयं ही हठयोग का अभ्यास आरम्भ कर देता है उसे किसी प्रकार की सफलता नहीं मिल पाती, प्रत्युत उसका शरीर रोगों का घर बन जाता है और वह शीघ्र ही काल का ग्रास बन जाता है।

प्रश्नः– हे गुरुदेव ! हठयोग के सम्बन्ध में कुछ लोगों का मत है कि–इस विद्या को गुप्त रखना चाहिए। किसी के आगे प्रकट नहीं करना चाहिये, इसका क्या अभिप्राय है ? ऐसा करने से तो यह विद्या ही लुप्त हो जायेगी, कोई भी इससे लाभ नहीं उठा पायेगा।

उत्तरः—हां पुत्र ! बात कुछ ऐसी ही है। शास्त्रों में स्पष्ट कहा गया है:—

गोपनीयं गोपनीयं
गोपनीयं प्रयत्नतः ।
दत्ते च सिद्धहानिः
स्यात्तस्माद्यत्नेन गोपयेद् ॥

इसका अर्थ है कि–हठयोग का उपदेश हर व्यक्ति को नहीं देना चाहिए। क्योंकि-अनधिकारी को दी हुई विद्या ऊसर भूमि में बोये हुए बीज के समान निरर्थक सिद्ध होती है। अतः पात्रता को देखकर ही हठयोग का उपदेश करना चाहिए। इसी प्रकार शिष्य को भी चाहिए कि–वह अपनी साधना को गुप्त रखे।

हमारे योगाचार्यों का आदेश है:—

हठविद्या परागोप्या
योगिना सिद्धिमिच्छता।
भवेद्वीर्यवती गुप्ता
निर्वीर्या तु प्रकाशिता।

जिस प्रकार सहजयोग का अभ्यासी अपने संयम नियमादि का पूर्णरूपेण पालन करता है इसी प्रकार हठयोग के अभ्यासी को अपनी साधना गुप्त रखनी चाहिए। गुप्तरूप से की हुई साधना बल देने वाली होती है किन्तु जो व्यक्ति मान-प्रतिष्ठा के लिये या धनप्राप्ति के लिये इसका प्रदर्शन करते रहते हैं वे अपने लक्ष्य तक नहीं पहुँच सकते। उनका योग सिद्ध नहीं होता।

यही कारण है कि–अनुभवी गुरुदेव शिष्य की योग्यता देखकर ही उसे हठयोग की विविध क्रियाओं में से किन्हीं एक–दो का उपदेश कर दिया करते हैं। वही एक–दो क्रियायें ही उसे कालान्तर में योगारूढ़ कर देती हैं।

प्रश्नः- प्रभो ! मुझे अबोध बालक को यह भी बतलाने की कृपा कीजिये कि-हठयोग की विविध क्रियायें कौन-कौन सी है और उनसे क्या-क्या लाभ है ?

उत्तरः—हे पुत्र ! अष्टाङ्गयोग के सिद्धान्तानुसार प्रत्येक योगाभ्यासी को यम-नियमों का पालन तो करना ही चाहिए। इसके साथ साथ शरीर शोधन के लिये नेती, धौती, वस्ती आदि षटकर्मों का तथा नाड़ीशुद्धि के लिये योगासनों का अभ्यास करना चाहिए। आसनों में भी पश्चिमोत्तान, सर्वाङ्गासन, शीर्षासन, वज्रासन, पद्मासन एवं सिद्धासन शारीरिक आरोग्य, ऊर्ध्वरेतसता एवं कुण्डलिनी जागरण में विशेष रूप से सहायक होते हैं। किन्तु अपने शरीर के बलाबल एवं प्रकृति को देखते हुये ही आसनों का अभ्यास करना चाहिए।

इसके बाद प्राणायाम की बारी आती है। इसका महत्व बताते हुए "योग कुण्डल्युपनिषद्" में कहा गया है: —

हेतुद्वयं हिचित्तस्य
वासना च समीरणः ।

तयोर्विनष्टे एकस्मिन्
द्वयोरपि विनश्यतः ।।
तयोरादौ समीरस्य
जयं कुर्यान्नरः सदा ।
मिताहारश्चासनं च
शक्तिचालनतृतीयकः ।।

अर्थात् चित्त की अस्थिरता के दो कारण होते हैं वासना और प्राण। इनमें से एक के नष्ट हो जाने पर दूसरा स्वयं ही नष्ट हो जाता है।

इसके लिये मिताहार, आसन और प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए। प्राणायाम हठयोग की एक प्रमुख क्रिया है। इसके कई भेद हैं और उनके अलग-अलग फल बताये गये हैं। इनमें शीतली प्राणायाम, सीत्कारी प्राणायाम, उज्जायी प्राणायाम, सूर्यभेदी प्राणायाम एवं भस्त्रिका प्राणायाम प्रमुख हैं। शीतली प्राणायाम एवं सीत्कारी प्राणायाम का अभ्यास हर व्यक्ति कर सकता है, किन्तु सूर्यभेदी प्राणायाम भस्त्रिका प्राणायाम, बन्ध एवं मुद्राओं का अभ्यास योग के उत्तम अधिकारी को ही गुरूपदेश से करना चाहिए। प्राणायाम की गणना तप में की गई है। इससे नाड़ियों के सभी मल जाते हैं, सभी प्रकार के पाप जलकर नष्ट हो जाते हैं और साधक मोक्ष द्वार तक पहुँच जाता है। प्राणायाम का फल बताते हुए महर्षि पतञ्जलिदेव जी महाराज ने कहा है:—

ततः क्षीयते प्रकाशावरणम्।

अर्थात् प्राणायाम सिद्ध हो जाने पर प्रकाश के रास्ते का आवरण नष्ट हो जाता है। जिससे साधक हजारों मील दूर देखने लगता है और हजारों मील दूर की बातें सुनने लगता है।

"योगतत्वोपनिषद" में कहा गया है:— यत्नपूर्वक अभ्यास करने से साधक में ये बाह्यचिह्न प्रकट हो जाते हैं—

उसका शरीर हल्का और तेजस्वी बन जाता है, जठराग्नि बढ़ जाती है और शरीर कृश हो जाता है।

इस अवसर पर योग में विघ्न करने वाले आहार त्याग देना चाहिए। नमक, तेल, खटाई, रूखा और तीक्ष्ण भोजन, स्त्री प्रसंग, अधिक चलना, हींग आदि मसाले, हरे साग, प्रातः काल का स्नान एवं उपवास तथा शरीर को कष्ट देने वाले सभी कार्य त्याग दे। अभ्यास काल के आरम्भ में केवल घी और दूध का ही सेवन करना चाहिए। अभ्यास करते समय जो पसीना आये उसे शरीर में ही मल लेना चाहिए। इसके बाद वायु की धारणा शक्ति धीरे-धीरे बढ़ती रहने से आसन

(शेष पृष्ठ ८ पर)

सत्यं·शिवं·सुन्दरम्

❀ आगे बढ़ो, पर ऊँचे भी चढ़ो ❀

❀ आचार्य श्री मुन्शीराम शर्मा

नीट्शे ने एक स्थान पर लिखा है : 'आगे बढ़ना अच्छा है, पर ऊँचे भी चढ़ना चाहिए।' इस कथन में जीवन-निर्माण का सार निहित है। जीवन की सफलता का तत्व केवल आगे बढ़ने, पद-प्रभुत्व-वैभव आदि प्राप्त करने में ही नहीं है, वह इससे भी आगे ऊँचे चढ़ने में भी है। आगे बढ़ना हममें से बहुतों को आता है, पर ऊँचा चढ़ना कठिन है। वह विरल व्यक्तियों में ही देखा जाता है।

ऊँचाई पर चढ़ना क्या है ? क्या नई-नई फैशन के कपड़े पहिन लेना, नई कट के जूते धारण करना, नये ढंग के बाल बनवाना, अमरीकी ढांचे के भवन खड़े करना, विदेशी साज-सज्जा से कक्षों को विभूषित करना ऊँचे बढ़ना है ? नहीं, ये तो वैभव के विलासपूर्ण खेल हैं और दूसरों की सहायता पर अवलम्बित है। सूचिकार और तन्तुवाय न हों, तो वस्त्र-वेष-भूषा एक कोने में पड़ी रहेगी, चर्मकार न हो तो पादत्राण ही न हो सके, फैशन की तो बात ही दूर है। इसी प्रकार नापितों, शिल्पियों, स्थापत्य-वेत्ताओं के अभाव में शरीर-शोभा, गृह-शोभा आदि सभी का अभाव हो जायगा। परावलम्बन आगे बढ़ा सकता है, पर नीचे गिरा भी सकता है, ऊँचे चढ़ाना तो उसके वश के बाहर की बात है। तो ऊँचे चढ़ना क्या है ? इसे समझने के लिए सामान्यजनक्षुण्ण पथ को छोड़ कर पार्वती-पथ को पकड़ो। पार्वती जैसी दृढ़निष्ठा, अटूट लगन और घोर तपश्चर्या का जीवन बिताओ। सामाजिकता का परित्याग करके कुछ क्षण ऐसे भी जीवन में निकालो जिनमें तुम एकान्त-दशा का अनुभव कर सको अर्थात् स्वस्थ, अपने में स्थित हो सको।

(शेष पृष्ठ ७ का)

पर बैठे हुए साधक की देह में कम्प होने लगता है। अभ्यास और अधिक बढ़ जाने पर उसकी दादुरी वृत्ति सिद्ध हो जाती है और वह मेढ़क की तरह उछलने लगता है। धीरे-धीरे उसका आसन भी जमीन पर से ऊपर उठने लग जाता है। भूचरी सिद्धि प्राप्त हो जाने पर उसका पृथ्वी तत्व पर एवं समस्त भूचर प्राणियों पर पूर्ण अधिकार हो जाता है। उसका शरीर कामदेव के समान सुन्दर हो जाता है।

इस प्रकार प्राणायाम का अभ्यासी बहुत थोड़े समय में योगैश्वर्य से सम्पन्न हो जाता है। साधक को यह बात अवश्य ध्यान में रखनी चाहिए कि-वह गुरुदेव के सान्निध्य में ही प्राणायाम एवं हठयोग की अन्य क्रियाओं का अभ्यास करे। —क्रमशः

सदोपदेश

❀ श्री राघवेन्द्र तिवारी

राघवेन्द्र वे नर बड़े, जे गुरु रहते पास ।
तिनका घर यह पृथ्वी, अरु सम्पूर्ण अकाश ॥१॥

यह सागर सन्तोष का, योग मछरिया जेइ ।
निज तन की वंशी बना, मोक्ष मार्ग गहि लेइ ॥२॥

समय चातुरी वही है, जो भव लेहि सुधारि ।
तृष्णा माया मोह कहुँ, जो मनु देहि विसारि ॥३॥

चन्दन ते गहि लीजिये, ताकी शीतल गंध ।
औ गुरु ते गहि योग लै, छूटे भव के बंध ॥४॥

सूखे तरन सी देह यह, हाड़ कि जैसे काठ ।
सींचें यामें योग जल, लख लोगे फिर ठाठ ॥५॥

दान, पुण्य अरु योग जब, ये चारों संसार ।
इनते बढ़ कर कछु नहीं, सुधि जन कियो विचार ॥६॥

योग सुकृत है कर्म है, अरु संयोग - वियोग ।
योग चराचर विश्व है, बिन मेंहि भटकें लोग ॥७॥

समय, योग दो सत्य हैं, बसे प्रकृति के माहि ।
कस्तूरी मृग सौ बनौ, क्यों भटकै जग मांहि ॥८॥

समय चूकि पुनि गुनै का, यह दुखिया संसार ।
माटी के यह लोग सब, माटी का घर द्वार ॥९॥

करो प्रार्थना एक जुट, सुखी रहें सब लोग ।
सद्गुरु जी की राह पर, करें साधना योग ॥१०॥

卐 इस्लाम धर्म की कुछ बातें 卐

प्रेषक : श्री मानिकचन्द उमर वैश्य

हजरत मुहम्मद को अपने समय की अरब में प्रचलित 'बुत-परस्ती' खटकने लगी और उन्होंने 'खुदा-परस्ती' का प्रचार करना निश्चय किया। बहुत दिनों तक मक्का के निकट हारा पर्वत की एक गुफा में एकान्तवास के अनन्तर उन्होंने अपनी स्त्रीसे सूचित किया कि फरिश्ता जिबराइल उनके पास यह समाचार लाये थे कि खुदा (ईश्वर) ने मुहम्मद को अपना पैगम्बर (देवदूत) नियत किया है। मुहम्मद अपठित थे और कुरान के वाक्य उनके मुख से आवेश की अवस्थाओं में निकले कहे जाते हैं। कुरान का मुख्य आशय खुदा की एकता है। कहते हैं—खुदा एक है और उसके सिवा कोई दूसरा नहीं है। मुहम्मद उसके पैगम्बर हैं। कलमा या इस्लाम धर्म की गायत्री का यही अर्थ है। इस्लाम के मुख्य अंग छः प्रकार के ईमान (सिद्धान्त) और चार प्रकार के दीन (कर्मकाण्ड) हैं। ईमान में खुदा, उनके पैगम्बर उनके फरिश्ते, कुरान, खुदा की सर्व शक्तिमत्ता तथा मृत्यु के पश्चात् न्याय के दिनों में विश्वास करना है। दीन के अङ्ग नमाज, रोजा, जकात और हज है।

हम लोग एकान्त में स्वस्थ चित्त बैठकर सन्ध्योपासन करते हैं, ईसाई घुटने टेक कर भगवच्चिन्तन करते हैं और यहूदी खड़े होकर प्रार्थना करते हैं, पर मुसलमानों की पांच वक्त की नमाज (प्रार्थना) का ढंग निराला ही है। चटाई अथवा जा-नमाज (दरी) पर ही प्रार्थना हो सकती है और नमाज के अवसर पर उपासक का मुख मक्के की ओर होना चाहिए। शारीरिक शुद्धि के बिना नमाज स्वीकृत नहीं होती। मैथुन इत्यादि अवस्थाओं के उपरान्त स्नान से ही शुद्धि होती है। अन्यथा हाथ-पैर और मुख को धोने से काम चल जाता है। जल के अभाव में बालू से काम चल सकता है। नमाज के समय ऊषा काल, मध्याह्न के उपरान्त, मध्याह्न तथा सायङ्काल के मध्य में सूर्यास्त के कुछ बाद और सोने के पूर्व हैं। ठीक इन समयों पर मस्जिद की मीनारों से इमाम लोग 'अल्ला हो अकबर' के नारे लगाते हैं। नमाज को स्त्री नहीं सुन सकती। नमाज में आठ प्रकार से उठना—बैठना पड़ता है, प्रार्थनायें छोटी होती हैं और अरबी भाषा पढ़ी जाती है। वे कई बार दुह-

राई जाती हैं। प्रत्येक प्रार्थना को रकोह कहते हैं। प्रत्येक शुक्रवार को मध्याह्न के उपरान्त की नमाज सामूहिक होती है।

इस्लामी संवत्सर (हिजरी) का प्रारम्भ रमजान मास से होता है। और महीने चान्द्र-मास होते हैं। उनके नाम— मुहर्रम, सफर, रबीउल-अव्वल, रबीउस्सानी, जमादुल अव्वल जमादुस्सानी, रजब, शाबान, रमजान शव्वाल जिलकद, और जिलहिज हैं। रमजान के महीने भर प्रतिदिन व्रत रखा जाता है, जिसे 'रोजा' कहते हैं। रोजा रखने में सूर्योदय से कुछ पहले तक भोजन कर लेते हैं। फिर दिन में न कुछ खाते न पीते हैं। सूर्यास्त के उपरांत फिर भोजन करते हैं। रमजान के अन्तिम शुक्रवार को अल्‌विदा (विदाई) कहते हैं और मासिक व्रत की समाप्ति पर द्वितीया के चन्द्र-दर्शन पर ईद-उल् फित्र मनाई जाती है। मुसलमान लोग शंकर जी के भाल पर स्थित चन्द्र ही को अपने प्रत्यक्ष देव मानते हैं।

जकात अथवा दान में अपने आपका चालीसवां भाग व्यय कर देना चाहिए। किसी मांगने वाले (सायल) को कटुवचन कहना मना है।

प्रत्येक मुसलमान को जीवन में एक बार मक्का नगर में स्थित काबे के मन्दिर की यात्रा करना आवश्यक है। मुहम्मद के पूर्व काबे के स्थान पर एक विशाल मन्दिर (शिवालय !) था। जिसे बिहिश्त (स्वर्ग) मन्दिर (बैतुल-मामूर) की नकल मानते थे। वर्तमान काबे में एक काला पत्थर है, जिसकी परिक्रमा करते हैं और जिसे चूमते हैं। कहते हैं यह स्वर्ग से आया है और पृथ्वी पर खुदा के दाहिने हाथ के सदृश है। इस पाषाण प्रतीक के कारण मक्का परम पवित्र माना जाता है। और इसकी सीमा के भीतर जीववध वर्जित है। हज (काबे की यात्रा) करने वाले हाजी कहलाते हैं। यात्रा के समय वे मक्का में मुण्डन कराते हैं और सादा श्वेत बिना सिला (कफन का) कपड़ा पहनते हैं। वहां के जमजम नामक कूप का जल गङ्गा जल के समान पवित्र माना जाता है।

हम लोगों की वैतरणी नदी के स्थान पर मुसलमानों में दोजख (नरक कुण्ड) है, जिस पर सरात नामक बाल से भी महीन पुल बँधा माना जाता है। इस पुल को पापी नहीं पार कर सकते, क्योंकि पुल के पार बिहिस्त (स्वर्ग) है—जहां पानी, दूध, शहद तथा शराब की नहरें बहती हैं। स्वर्ग में मुश्क (कस्तूरी) की बनी ७२ हूरें (सुन्दरियां) और ७०,००० गिलमा (सुन्दर बालक सेवक) प्रत्येक पुण्यात्मा को मिलते हैं। कयामत की कल्पना हमारे प्रलय से मिलती है। उसी के बाद प्रत्येक कब्र से मुर्दे उठ खड़े होंगे और उनके पुण्य-पाप का न्याय होगा।

इस्लाम धर्म में प्रत्येक मुसलमान समान पद रखता है। धार्मिक बातों में ऊँच-नीच का कोई भेद नहीं। इसी कारण इसे परम प्रजासत्तात्मक (Most democretic) धर्म कहते हैं। इस्लाम धर्म का नेता खलीफा कहा जाता है।

मुहम्मद के मरने पर कुछ मुसलमानों का मत था कि उनके उत्तराधिकारी (खलीफा) उनके वंशज ही हों और कुछ का कहना था कि सबसे योग्य पुरुष खलीफा हो, जिसे जनता चुने। पूर्व-मत वाले शिया कहलाये और पर-मतवाले सुन्नी। सुन्नियों की बात रही और मुहम्मद के चचेरे भाई अली के होते हुए भी अबूबकर खलीफा चुने गये। अबूबकर के बाद उमर और उनके बाद उस्मान खलीफा हुए। उस्मान के मरने पर उपर्युक्त अली (जो हजरत मुहम्मद के दामाद भी थे) खलीफा चुने गये। लेकिन शाम के गवर्नर माविया (जो खलीफा पद का दावा कर रहे थे) ने हजरत अली को नमाज के समय मरवा डाला। अली के बाद उनके बड़े लड़के हसन खलीफा चुने गये, पर माविया ने उनको भी विष दिलवाकर मरवा डाला हसन के मरने पर कूफा नामक नगर के निवासियों के आग्रह से हसन के भाई हुसेन खलीफा नियुक्त होने के लिए कूफा को चले। पर कर्बला के मैदान में ७२ साथियों के साथ हजरत हुसन, माविया के पुत्र यजीद की सेना द्वारा मार डाले गये। इसी कर्बला की हत्या का स्मारक मुहर्रम का का त्यौहार है। हुसेन का घोड़ा जुलजिनाह था, जो आजकल दुलदुल के नाम से निकाला जाता है। ताजिया हजरत हुसेन की कब्र का स्मारक है। इस अवसर (वह मुख्यतः शिया लोगों का त्यौहार है) लोग हरे तथा काले कपड़े पहनते हैं। हरे वस्त्र हजरत हसन को विष देने की याद दिलाते हैं और काले वस्त्र हजरत हुसेन की मृत्यु पर शोक प्रकट करते हैं। प्रत्येक शहर में उस स्थान को जहां ताजिये दफनाये जाते हैं, कर्बला की युद्ध के यादगार में कर्बला कहते हैं।

हुसेन की मृत्यु के पश्चात् माविया का पुत्र यजीद खलीफा माना गया, पर शिया लोग उसको नहीं मानते। वे हजरत मुहम्मद के वंशज अली को ही अपना पहला इमाम मानते हैं अली के बाद हसन और उसके बाद हसन के भाई हुसेन को मानते हैं। हुसेन के बाद क्रमशः वंश परम्परा से जैनुल आबदीन अल् बाकिर, अल् जाफर, मूसा काजिम, अल्-रीदा, तकी, नकी, असकरी नामक इमाम हुए। ये सब अली और उनके लड़के हसन तथा हुसेन की तरह मारे गये। अन्तिम बारहवें इमाम—अल्मेहदी हुए, जिनके लिए कहा जाता है कि वे जीवित रहते हुए भी

लुप्त हैं। कालान्तर में हजरत ईसा के साथ प्रगट होकर जगत् भर को इस्लाम धर्म में दीक्षित करेंगे। शिया सदा अपने इमामों की अपमृत्यु का शोक मनाते रहते हैं। वे लोग बड़े भाव पूर्णरूप से मातम करते हैं और सुन्नियों से यजीद के अनुयायी होने के कारण बुरा मानते हैं। यही नहीं, शिया लोग अली के पूर्व वाले खलीफा अबूबकर, उमर और उस्मान से चिढ़ते हैं और उनके विरुद्ध शापवत् 'तवर्रा' पढ़ते हैं। इसके जवाब में सुन्नी लोग इन तीनों खलीफाओं का गुणगान 'मदे-सहाबा' पढ़कर करते हैं।

यजीद उमैय्यद घराने के थे, अतः उनके बाद वाले शामवासी खलीफा (जिन्हें केवल सुन्नी मानते थे) उमैय्यद कहलाये। कालान्तर में अब्बासी खलीफाओं ने बगदाद को अपनी राजधानी बनाया और ग्यारहवीं सदी से बगदाद से ध्वस्त होने पर तुर्क खलीफा कुस्तुन्तुनियां में रहने लगे। इस समय यह पद उठ गया है। —कल्याण से साभार

मूल्य वृद्धि की सूचना—

❀ सिद्धयोग के ग्राहकों की सेवा में ❀

'सिद्धयोग' के प्रिय ग्राहकों की सेवा में हमें सूचित करने को विवश और बाध्य होना पड़ रहा है कि 'सिद्धयोग' में काम आने वाले प्रिंटिंग पेपर के तथा मुद्रण सम्बन्धी श्रम तथा अन्य आवश्यक वस्तुओं के मूल्यों में अत्यधिक वृद्धि हो जाने के कारण 'सिद्धयोग' का वार्षिक मूल्य आगामीवर्ष से जो चैत्र शुक्ला रामनवमी के पर्व से प्रारम्भ होता रहा है—१५ रुपये के स्थान पर १८ रुपया वार्षिक कर देने का निर्णय लिया गया है। अन्य पत्र-पत्रिकाओं के वार्षिक मूल्य की अपेक्षा फिरभी यह मूल्य न्यूनतम है। आशा है 'सिद्धयोग' के पाठक हमारी इस सूचना को ध्यान में रखकर आगामी वर्ष के लिए अपना-अपना वार्षिक मूल्य १८ अठारह रुपया हमें मनीआर्डर द्वारा भेजने की कृपा करेंगे।

भवदीय :

श्रीनाथ शर्मा ब्रह्मचारी

व्यवस्थापक—सिद्धयोग—कार्यालय

श्री सिद्धगुफा योग प्रशिक्षण केन्द्र—सवाई, आगरा

गृहस्थ के लिए आवश्यक पंच महायज्ञों का विधान

❀ श्री हीरालाल शास्त्री, फर्रुखाबाद

भारतवर्ष में प्राचीन काल से अहिंसा का पालन तत्परता से करने के लिए हिन्दू कहलाने वाले वर्ग को प्रतिदिन ५ यज्ञों का विधान किया था जिनसे अपने पराये सब सुख रहित थे। मनुस्मृति—

पञ्चसूनागृहस्थस्य चुल्लीपेषण्युपस्करः।
कण्डनीचोद कुम्भश्च वध्यते यास्तुवाहन्॥
(मनु० ३/६८)

अर्थात् चूल्हा, सिललोढ़ा, झाड़ू, उखली, घड़ा वास्तव में गृहस्थ के घर में यह पांच कसाई खाने कहे जाते हैं अतः अनिवार्य रूपसे होने वाली इस हिंसा का भी विधान हमारे पूर्वजों ने विचारपूर्वक प्रायश्चित्त और उपाय निश्चित किया है। जैसे 'देवतातिथिभृत्यानां पितृणा मात्मनश्चयः। वा निर्वपतिपञ्चाना-मुछ्सन्नसजीवात श्रुतिप्रमाण—निष्कारणो वेदोऽध्येयोज्ञेयश्च। अर्थात् वेद को निष्कारण पढ़ना और जानना चाहिए। (यही ब्रह्मयज्ञ कहा जाता है) अध्ययन उसी ज्ञान का करते हैं जिससे धन की प्राप्ति अवश्य हो। यद्यपि अंग्रेजी शासन ने भारत की सभ्यता को भुलाने के लिए अपनी भाषा का प्रचार किया और उसमें नौकरी का विधान कर दिया जिससे अधिकतरने संस्कृत को छोड़कर नौकरी वाली भाषा का अध्ययन प्रारम्भ कर दिया और वेद को छोड़ दिया। वास्तव में शरीर और मन की शुद्धि करने वाली और ब्रह्म की प्राप्ति कराने वाली संस्कृत का ही परित्याग कर दिया तब वेदाध्ययन करना तो प्रायः असंभव ही हो गया। इस असम्भवता में भी ऋषियों ने कल्याण के लिए नियम बनाये कि गौतम, आपस्तम्ब—एकमृयमेकं वायजुरेकं वा सामा-भिव्याहरेत्। अर्थात् ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद की एक ऋचा का ही अध्ययन कर ले मनु का वचन है—

अपां समीपे नियतो
नैत्यिकं विधिमास्थितः।
सावित्रीमप्यधीयति
गत्वारण्यं समाहितः॥

नित्य के अवश्य अध्येय वेदाध्ययन के

लिए कम से कम इतना अवश्य ही करे कि वन में जलाशय के समीप बैठकर सावधान होकर गायत्री का जप करे इससे भी त्रुटि देखकर कि एक ही व्यक्ति के अध्ययन से संसार का ही दीर्घ काल तक कोई लाभ नहीं हो सकता— इसीलिए इस परम्परा को चलाने के लिए उपाय करना चाहिये जिससे नवीन वेद ज्ञाता उत्पन्न होते रहें। इसलिये अधिकारी शिष्यों को वेद पढ़ाना चाहिये। यथा—

यो विद्यामधीत्य आर्थिने न ब्रूयात्
स कार्यहास्यात् श्रे यसोद्धार मपावृनुयात्।

अर्थात् जो वेदाध्यान करके शिष्य को उसका अध्यापन नही कराता, वह कार्य की हानि करता है और कल्याण का मार्ग ही बंद कर देता है। मनु का वाक्य—

यमेव तु शुचिं विद्या
नियतं ब्रह्मचारियम्।
तस्मै मां ब्रूहि विप्राय
निधिपाया प्रमादिने॥

अर्थात् जिसे तुम पवित्र-जितेन्द्रिय- ब्रह्मचारी मुझ निधिकारक्षक अप्रमादि विप्र को पढ़ा करे। प्रतिदिन तिलोदक देकर पितरों को तृप्त करना और एक ब्राह्मण को भोजन कराना इस प्रकार पितरों को तृप्त करना यह दैनिक प्रसिद्ध पितृयज्ञ है। हां पितृ पक्ष में प्रतिदिन पार्वण श्राद्ध करने का विधान है। परञ्च आधुनिक समय में तो प्रायः तर्पण ही करके अपनी श्रद्धा प्रकट करते हैं केवल मृत्यु तिथि को श्राद्ध, ब्राह्मण भोजन देने में अपना कर्तव्य पूर्ण समझते हैं।

वास्तव में अर्थयादि नित्य पितरों की और परलोकगामी नैमित्यिक पितरों को पिंड प्रदानादि से किये जाने वाले सेवारूप यज्ञ को पितृयज्ञ कहते हैं।

सन्मार्ग में लगाने और असन्मार्ग से बचाकर माता, पिता, पुत्र का ज्ञान प्राप्ति कराते हैं। उन्हीं के अथक परिश्रम से मनुष्य धर्म-अर्थ, काम-मोक्ष को प्राप्त होकर सुखी होता है। ऐसे दयालु माता, पिता की प्राप्ति के लिए उनके सम्मान के लिए अपनी कृतज्ञता के लिए उनसे उऋण होने के लिए पितृयज्ञ नितान्त आवश्यक है। आधुनिक काल में विरले ही पुत्र इस प्रकार माता-पिता का महत्त्व मानते हैं। अधिकतर स्त्रियों की प्राप्ति होने के बाद वृद्ध माता-पिता को साधारण भोजन भी नहीं दे सकते। परञ्च समधिक अवज्ञा करते है। फिर वह सुखी कैसे रह सकते हैं। श्री तुलसीदास जी कहते हैं—

नारि विवशनर सकल गुसायीं।
नाचहिं नट मर्कट की नायीं॥

ऐसी दशा में माता, पिता तो मनुष्य के होते हैं उनकी स्त्रियां पति की माता को क्यों

मान सकती है यह ख्याल तो मनुष्य की बुद्धि पर ही निर्भर है।

देवयज्ञ—जिसमें सूर्य, अग्नि, चन्द्र, शिव, विष्णु, ब्रह्मा, लक्ष्मी, नवग्रह आदि की प्रीति के लिए घृत द्वारा आहुति दी जाती है यही देवयज्ञ कहा जाता है।

अग्नौ प्रास्ताहुतिः
सम्यक् आदित्यमुपतिष्ठते।
आदित्याज्जायते वृष्टिः
वृष्टेरन्नं ततः प्रजाः॥

अर्थात् अग्नि में जो आहुति दी जाती है वह आदित्य में पहुँचती है आदित्य से वर्षा होती है वर्षा से अन्न होता है अन्न से प्राणी उत्पन्न होते और जीते हैं।

भूतयज्ञ—सभी जीवों पशु, पक्षी, कृमि, कीट, कुत्ता, चाण्डाल, अन्त्यज, अपाहिज सबको शक्ति अनुसार प्रतिदिन सिद्ध अन्न देने का विधान है। जिससे रोटी का प्रश्न हल होकर आपस में प्रेम बढ़े। दुःख दरिद्रता आजकल की सी न रहे।

नृयज्ञ—अतिथि सत्कार करना नृयज्ञ कहलाता है। आजकल अपने दोस्तों में पुरुष और स्त्रियां अपनी सहेलियों में इसका प्रचार यथा कथंचित चाय, दालमोठ मुंगोड़ी, पकौड़ी आदि से तो करते हैं वह भी बदले की भावना प्रधान होती है। भूखा, गरीब अपरिचित व अपाहिज आ जाय तो उसके लिए हम लोगों के घर में या हृदय में कोई स्थान नहीं है। प्रायः निराश होकर ही लौटता है। भारत में पूर्वज दम्पति अतिथि को भोजन करा कर ही स्वयं करते थे। यह प्रत्येक गृहस्थी का साधारण धर्म था इसीसे वह अबकी अपेक्षा सुखी थे। मनुस्मृति—

अघं स केवलं भुङ्क्ते यः
पचत्यात्म कारणात्।
(३/११८)

अर्थात् अपने लिए रसोई बनाने वाला पाप का ही भक्षण करता है। पञ्चमहायज्ञ के विवरण से आप अवश्य समझ गये होंगे कि जब घर में ५ महायज्ञ होते थे तब कोई झगड़ा विषमता, संघर्ष नाम वाले दृश्य सामने नहीं सुनाई पड़ते थे जैसे कि आज हो रहे हैं। जीवन यात्रा सुखपूर्वक ही सब प्रकार चलती थी। कृत्रिमता नाम की कोई वस्तु नहीं दिखाई देती थी।

कृत्रिमता—आज के समय में समाज कृत्रिमता की तरफ दौड़ रहा है। अपनी सत्य दशा पर पर्दा डालकर कृत्रिम रूप से संसार के सामने आने का ही प्रयत्न करता है। इसी कारण दुःख उठाता है। अतः कृत्रिमता को त्यागकर सत्यता का पालन करते हुए जीवन निर्वाह करना चाहिए।

श्री ज्ञानचन्द जी को जीवन दान

श्री रामसजीवनसिंह इलाहाबाद

सद्‌गुरुकृपा अगाध अति, समझ सका ना कोय।
निरमल मन श्रद्धालुअति, अधिकारीपर होय॥
अधिकारी पर होय पाप सन्ताप नसावै।
मृत्यु-पाश तब कटे नहीं यम की चल पावै॥
मन वांछित फल देत मात खाता है सुरतरु।
जिस पर हो अनुकूल दयानिधि प्यारे सद्‌गुरु॥

मेरे गुरु-भाइयों के साथ कभी-कभी चमत्कारिक घटनायें घटित होती हैं जिन्हें "सिद्धयोग" में उनकी अनुमति से प्रकाशित किया जाता है। जिनके साथ घटनायें घटित होती हैं, या तो वे स्वयं लिख कर भेजते हैं या दूसरा उनकी अनुमति से लिखकर भेजता है। मेरे सद्‌गुरु देव की अनुकम्पा से श्री ज्ञानचन्द जी निवासी ४६४ मुट्ठीगंज, इलाहाबाद के साथ भी एक अद्‌भुत चमत्कार हुआ। उन्होंने मुझे सुनाया। जैसा उन्होंने मुझे बताया वैसा ही मैं उनकी अनुमति से पाठकों के समक्ष प्रस्तुत कर रहा हूँ।

दिनांक २ नवम्बर १९८० दिन रविवार को ज्वर से पीड़ित श्री ज्ञानचन्द जी के मनमें ग्लानि उत्पन्न हुई। दोपहर बारह बजे का समय था। जिस कमरे में गुरुजी का चित्र

[पिछले पृष्ठ का शेष]

पञ्चमहायज्ञ का वर्णन ऋषियों ने अपने धर्म-ग्रन्थों में यत्र-तत्र किया है।

तैत्तियारण्यक में--

पञ्चवा एते महायज्ञा सतति प्रतायन्ते, देवयज्ञः, पितृयज्ञः, मनुष्य यज्ञः, भूतयज्ञः, ब्रह्मयज्ञः।

आश्वलायन में— अथातो पञ्चमहायज्ञाः देवयज्ञः, भूतयज्ञः, पितृयज्ञः, ब्रह्मयज्ञः, मनुष्ययज्ञः।

छान्दोग्य परिशिष्ट--

देव भूत पितृ ब्रह्म मनुष्याणामनुक्रमात्।
महासत्राणि जानीयात् त एव हि महामखा।

इसी प्रकार याज्ञवल्क्य, मनुस्मृति आदि में इनका वर्णन है।

भगवान कृष्ण ने भी कहा है—

यज्ञ शिष्टाशिनः सन्तः
मुच्यन्ते सर्व किल्विषैः।

इत्यादि।

स्थापित किया था, उसी कमरे के ठीक सामने दरवाजे पर बरामदे में वे लेटे हुए थे। दरवाजे से दोनों प्रभुजी के चित्रों को अच्छी तरह देखा जा सकता है। वे खाट पर लेटे-लेटे गुरु-मन्त्र का जाप करने लगे। परिणाम स्वरूप उनका ध्यान लग गया।

ध्यानमें उनके समक्ष काले भैंसे पर सवार हाथ में श्वेत रंग का चमचमाता खड्ग लेकर यमराज आ गया। उसका रंग काला था। बड़ी-बड़ी ऐंठी मूछें। लाल-लाल विशाल नेत्र। भयानक चेहरा। शरीर मोटा। उसने श्री ज्ञानचन्द जी से कहा, "चलो, तुम्हारा समय हो गया।" इतना कह कर उनके दोनों पांव में बन्धन डाल दिया। श्री ज्ञानचन्द जी ने कहा, "मैं चलने को तैयार हूँ। मुझे कोई ऐतराज नहीं है।" तत्पश्चात् उनके अन्तः-करण से उंगली के अग्र पोर के बराबर जलती हुई ज्योति मुखद्वार से बाहर निकली। इतने में नेपाल वासी हमारे दादा गुरु महाप्रभु योग योगेश्वर अनन्त श्री रामलाल जी महाराज श्री ज्ञानचन्द जी के समक्ष आ गये। उनके मुख से निकली हुई ज्योति मेरे महाप्रभु जी के गोद में टिक गई। गुरुदेव योग योगेश्वर अनंत श्री चन्द्रमोहन जी महाराज भी आ उपस्थित हुए। दोनों प्रभुजी का आसन जमीन से ३ फीट ऊँचा था।

यमराज की ओर देखकर महाप्रभु राम-लाल जी बोले, "बिना मेरी आज्ञा के तू इसे कैसे ले जायगा।" यमराज ने कहा, "बिना आपकी आज्ञा के तो नहीं ले जाऊंगा। किन्तु इनका समय पूरा हो गया है।" महाप्रभु जी ने कहा, "इसकी आयु ८७ वर्ष ३ माह है। अभी इसकी आयु २५ वर्ष ३ माह शेष है। तू इसे कैसे ले जायगा?" यमराज ने कहा, "इनका समय पूरा हो गया है।" महाप्रभु रामलाल जी बोले, "अगर इनको तुम समय से पहले ले जाओगे तो ब्रह्मा का विधान झूंठा हो जायेगा। हमारी आज्ञा के बिना हमारे बच्चे को तुम नहीं ले जा सकते। तुम वापस चले जाओ।" इतना कहते हुए मेरे महाप्रभु योग योगेश्वर अनन्त श्री रामलाल जी महा-राज अपने असली शिव रूप में प्रकट हो गये और त्रिशूल से यमराज के बन्धन से श्री ज्ञान-चन्द जी को मुक्त कर दिया।

यमराज के बन्धन कटते ही उंगली के अग्र पोर के बराबर जलता हुआ प्रकाश महाप्रभु जी की गोद से उठकर श्री ज्ञानचन्द जी के मुख से पुनः अन्तःकरण में प्रवेश कर गया। वे उठकर महाप्रभु जी के चरणों को पकड़ कर १५ मिनट तक रोते रहे। बार-बार यही कहते थे, प्रभुजी मुझे ले चलिए। लगता है मुझे बहुत तकलीफ भोगनी पड़ेगी। बुढ़ापे में मेरे लड़के मेरी सेवा नहीं करेंगे। अब आप मुझे ले चलिए।"

दीन वचनों को सुनकर करुणासागर बोले, "घबराओ नहीं। तुम्हें किसी की सेवा की जरूरत नहीं होगी। मैं तुम्हें चलते फिरते ले चलूंगा।" बहुत हठ करने पर महाप्रभु जी ने फिर कहा, "तुमसे पहले तो तुम्हारी पत्नी लीला को जाना है। तुमको कैसे ले चलूं ? फिर केवल तुम्हें बुखार ही तो है। अगर और कोई कष्ट महसूस हो रहा हो तो बताओ ? तुम चौथे दिन बुद्धवार को बिल्कुल ठीक हो जाओगे। दो घण्टे बाद तुम्हारे शरीर का दर्द बिल्कुल नहीं रहेगा।"

महाप्रभु के कथनानुसार ध्यान खुलने के ठीक दो घण्टे बाद उनके शरीर का दर्द गायब हो गया था और वे अपने को बिल्कुल स्वस्थ अनुभव करने लगे थे।

श्री ज्ञानचन्द जी ने महाप्रभु जी से पूछा, "आपके दर्शन होने के समय चारों तरफ प्रकाश ही प्रकाश दिखाई पड़ता है। लेकिन हम आपके दर्शन बिना प्रकाशके कर रहे हैं।" महाप्रभु जी ने उत्तर दिया, "कभी-कभी ऐसा हुआ करता है। बिना प्रकाश के दर्शन होते हैं।" उसी समय सामने के कमरे से जहाँ दोनों प्रभुजी के चित्र स्थापित थे श्वेत अल्फी धारण किये हुए एक महात्मा श्वेत जटाधारी तथा सफेद दाढ़ी वाले उनकी ओर दो बार आते दिखलाई पड़े। उन्होंने अपने करतल से दो बार आशीर्वाद दिया। श्री ज्ञानचन्द जी उन्हें पहचान न सके। श्री ज्ञानचन्द जी से जब मैंने उनके वेश और आकृति के विषय में जोर देकर पूछा तो उन्होंने बताया, "लगता है सन् १९७२ में प्रकाशित "सिद्धयोग" में बड़े प्रभुजी के चित्र के समान ही उनका वेश और आकृति थी।' मुझे लगता है कि श्री ज्ञानचन्द जी के प्रकाश के बारे में प्रश्न करने पर उन्होंने अपना दूसरा वेश दिखाते यह प्रमाणित किया हो कि भिन्न भिन्न रूप में उनके दर्शन हो सकते हैं।

इसी बीच मेरे सद्गुरुदेव योग योगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज ने उन्हें अपने तीन रूप दिखाये- श्वेत वस्त्रधारी लक्ष्मी सहित श्री विष्णु, सीता सहित मर्यादा पुरुषोत्तम राम तथा योग योगेश्वर राधा सहित श्रीकृष्ण। इससे मेरे गुरुदेव ने ज्ञानचंद जी के प्रश्न का अच्छी तरह समाधान कर दिया।

तत्पश्चात एक जोगिया वस्त्रधारी सन्यासी ने उनके घरमें प्रवेश किया। प्रभुजी को उसने प्रणाम किया। प्रभुजी ने पूछा, "तुम कैसे आये ?" उसने उत्तर दिया, "मैं अपनी बच्ची को देखने आया हूँ। यदि आपकी आज्ञा हो तो देख लूं।" प्रभुजी ने आज्ञा दे दी। आगंतुक सन्यासी अन्दर चले गये। ये वृद्ध सन्यासी जमीन से २ फीट ऊँचे आसन पर दक्षिण दिशा की ओर मुँह करके बैठ गये। इतने में प्रभुजी

ने श्री ज्ञानचन्द जी से कहा, "बेटा तुम्हारे अस्वस्थ रहने पर हमारी आरती भी कोई नहीं करता। अपनी पुत्रवधू से कहो कि पेटी पर से २ फीट ऊँचे आसन पर बैठे हुए अपने महात्मा गुरुदेव की आरती कर ले और दर्शन कर ले।' वह घर का काम कर रही थी। श्री ज्ञानचन्द जी ने कहा, "घर का काम छोड़ दो। अपने गुरुदेव की आरती कर लो।" उन्होंने अपनी धर्म-पत्नी श्रीमती लीलादेवी से भी कहा, "तुम लोग हमारे अस्वस्थ रहने पर आरती नहीं करते हो। प्रभुजी ने आज्ञा दी है कि आरती करो। सबने आरती किया। लेटे-लेटे श्री ज्ञानचन्द जी ने भी आरती किया।

इस प्रकार ध्यान खुलने पर भी श्री ज्ञानचन्द जी खुली आंखों से आरती करते समय दादा गुरु महाप्रभु योग योगेश्वर अनन्त श्री रामलाल जी तथा गुरुदेव योग योगेश्वर अनंत श्री चन्द्रमोहन जी महाराज के दर्शन करते रहे। ध्यान खुलने पर उनकी पुत्रवधू ने स्वयं अपने ससुर से बताया कि उसने एक महात्मा से दीक्षा ली थी। श्री ज्ञानचन्द जी ने कहा, "तुम्हारे गुरुदेव का यही वेश है जो मैंने देखा है।" उनकी पुत्रवधू ने कहा, "हां उनका यही वेश है।" यह वही महात्मा थे।

श्री ज्ञानचन्द जी के पुत्र अनिल ने मुझे सोमवार को अपनी दुकान पर इतना बताया था कि गुरुजी के कथनानुसार उनके पिताजी बुद्धवार को ठीक हो जायेंगे। बुद्धवार को मैं पुनः शाम को उनकी दुकान पर पहुँचा तो देखा कि श्री ज्ञानचन्द जी बैठे मुस्करा रहे थे। मुझे देखते ही उनके मुँह से निकल पड़ा "मैंने जिन्दगी में पहली बार देखा है कि आदमी कैसे मरता है और कैसे जिन्दा होता है।" तत्पश्चात् उन्होंने विधिवत उक्त सारी घटना कह सुनाई।

मैंने कहा आप जैसा भाग्यशाली बिरला ही हो सकता है। धन्य हैं आप जिसे प्रभुजी ने काल के गाल से खींच लिया। अन्त में कहना चाहूँगा..............

घटना ऐसी घटत है, गुरु भक्तों के साथ।
निरबल दीन अनाथके, बनजाते प्रभु नाथ॥
बन जाते प्रभु नाथ, भार जीवन का गहते।
समय-समय पर कष्ट निवारण करते रहते॥
श्रद्धालु चेले को समझो कच्चा घट ना।
चमत्कार कहलाती उनकी ऐसी घटना॥

वरदान!

वर्षों की कठिन तपस्या के फलस्वरूप भक्तको दर्शन देकर भगवान् ने कहा—भक्त मैं तुमसे प्रसन्न हुआ, वरदान मांगो। 'मैं संसार की प्रत्येक वस्तु में सुन्दरता देखना चाहता हूँ।' भक्त ने मांगा। 'तथास्तु!' कहकर भगवान अन्तर्ध्यान हो गये। भक्त तत्काल ज्योतिहीन हो गया।

—सन्तोषकुमार गौड़

मोतिया बिन्द का प्राकृत उपचार

❀ श्री साधनानन्द

सारे विश्व में मोतिया बिन्द का रोग बड़ी तेजी से बढ़ रहा है। डाक्टरों के पास आपरेशन के अतिरिक्त मोतिया बिन्द को दूर करने का कोई उपाय नहीं है। वह भी जब पक जावे। भारत में जाड़े के दिनों में लाखों आपरेशन होते हैं। प्रति वर्ष इनकी संख्या में वृद्धि होती है। लोग हजारों लाखों रुपये बड़े उत्साह से दान धर्म के नाम पर खर्च करते हैं और बड़े खुश होते हैं कि हमने बहुत बड़ा पुण्य का कार्य किया है। अन्धे को आंख मिल जाय यह पुण्य तो है ही। परन्तु इससे अधिक पुण्य तो तब हो सकता है जब मोतिया बिन्द न होने पावे ऐसे ज्ञानका प्रशिक्षण और प्रचार किया जाय। प्राकृतिक भोजन और उपचार से मोतिया बिन्द का रोकना बड़ा आसान है।

मोतियाबिन्द के रोकने का सरल उपाय

मोतियाबिन्द के आपरेशन करने के बाद डाक्टर रोगी की आंख में हरी पट्टी बांध देता है। इससे यह बात सिद्ध होती है कि आंखों के लिए हरा रङ्ग अत्यन्त आवश्यक है। यदि हम प्रतिदिन हरी पत्ती के साग या उनके रस का प्रयोग करें तो मोतिया बिन्द क्या कोई रोग न होगा।

मोतियाबिन्द का रोग धीरे-धीरे बढ़ता है। डाक्टर रोगी से यह कह देते हैं कि अभी आपरेशन नहीं होगा। परन्तु उसके रोकने या ठीक होने का उपाय नहीं बताते हैं। बेचारा वृद्ध सालों प्रतीक्षा करता है। प्राकृतिक चिकित्सा में मोतिया बिन्द न हो इसकी चिकित्सा बड़ी सरल है। प्रारम्भ में भी प्राकृतिक भोजन और उपचार से ठीक किया जा सकता है।

प्रत्येक व्यक्ति यदि प्रतिदिन अपने भोजन में चने का साग, पालक, चंलाई की पत्तियों का एक गिलास रस पी लिया करे तो मोतिया बिन्द नहीं होगा, यदि हो गया होगा तो ठीक हो जायगा। प्रातःकाल या भोजन के बाद पीना चाहिए।

रात्रि को सोते समय आंखों में नीम या कमल के फूल का शहद लगाने से भी मोतिया बिन्द ठीक हो जाता है।

शहद और अपामार्ग (चिड़चिडा) की जड़ शहद के साथ घिसकर लगाने से लाभ होगा।

प्रतिदिन असली चन्दन घिसकर माथे में लगाने से मोतियाबिन्द नहीं होता है। शुद्ध गाय का घी रात्रि को सोते समय आंखों में लगाने से लाभ होता है।

आंखें क्यों खराब होती हैं ?

आंखों की खराबी के कई कारण हो सकते हैं जिनमें मुख्यतः आंखों को सफाई और अप्राकृतिक भोजन हैं। जिसकी ओर लोगों का ध्यान अभी तक नहीं गया है। यद्यपि लोग नित्य आंखें धोते हैं, परन्तु आंखें कब और कैसे धोनी चाहियें इसका ज्ञान लोगों को नहीं है। घर की मातायें छोटे बच्चों की आंखों की सफाई करना नहीं जानती हैं। जिनके कारण बच्चों की आंखें खराब हो जाती हैं। छोटे बालक जब जग जाते हैं और रोने लगते हैं, मां अपने काम में लगी रहती हैं बच्चा आंखों को मलता रहता है, इससे आंखें खराब होती हैं। मां को चाहिए कि बच्चे को रोने न दे, आंखों को मलने न दें, जैसे ही बच्चे जग जांय तुरन्त उनकी आंखों की सफाई कर दें, इससे आंखें कभी खराब नहीं होती हैं। जब बच्चे अपने हाथ से आँखें धोने लग जाते हैं तो माता-पिता बच्चों की तरफ से असावधान हो जाते हैं। इसमें भी बच्चों की सफाई का ध्यान रखना चाहिए। बच्चे क्या प्रत्येक व्यक्ति को अपनी आंखों की सफाई का बराबर ध्यान रखना परमावश्यक है। जो भोजन मनुष्य करता है, उससे आंखों को जो शक्ति मिलनी चाहिए वह नहीं मिलती है। आंखों की सही सफाई और भोजन का प्राकृतिक सुधार कर दिया जाय तो आंखों को कभी कोई तकलीफ नहीं हो सकती है।

स्कूल में पढ़ने वाले विद्यार्थियों की आंखों की यदि परीक्षा सही ढङ्ग से की जाय तो ५ प्रतिशत ही ऐसे बच्चे निकलेंगे कि जिनकी आंखें ठीक होंगी। बाकी की आंखों में कुछ न कुछ खराबी अवश्य होगी। इसका मुख्य कारण बच्चों का गलत भोजन और आंखों की सही सफाई न करना है। स्कूली बच्चों के दैनिक जीवन का अध्ययन किया जाय तो कई ऐसी बातें निकलेंगी जिसके कारण उनकी आंखें खराब होती हैं। इसके कुछ कारण नीचे दिये जाते हैं।

१—प्रत्येक विद्यार्थी को नित्य सूर्योदय के एक घण्टे पहले अवश्य ही चारपाई छोड़ देनी चाहिए।

२—मैंने देखा है कोई-कोई विद्यार्थी ८-९ बजे तक आंखें नहीं साफ करते, आंखों की सफाई के लिए, उठने के बाद, भोजन के बाद, सोने के पहले, मुंह में पानी भर कर लोटे में ठण्डा पानी लेकर २५-३० छींटे देकर आँखों की सफाई करना चाहिये।

३—कब्ज का रहना, जिन विद्यार्थियों को

उठने के बाद तुरन्त शौच की हाजत नहीं होती उन्हें कब्ज रहता है। जिसके कारण सिर दर्द रहने लगता है, सिर दर्द के कारण भी आंखें खराब हो जाती है। इसलिए प्रत्येक विद्यार्थी को शौच के पहले पेट भर पानी पीना चाहिए। पानी पीने से शौच साफ होता है।

४—बिजली की तेज रोशनीमें अधिक देर तक पढ़ना या मन्द प्रकाश में पढ़ना, यह दोनों बातें हानिकारक हैं। सूरज की रोशनी में पढ़ना-लिखना लाभकारी होता है।

५—बाजार की बनी वस्तुओं का खाना, जैसे चाट, बिस्कुट, चाय, चीनी, मिठाई, डबल रोटी आदि जो स्वास्थ्य के लिए हानिकारक तो है ही उनका प्रभाव आंखों पर भी पड़ता है।

६—व्यायाम का अभाव, आंखों के व्यायाम करने की प्रथा ससार में नही के बराबर है। शारीरिक व्यायाम में भी योगासन करना ही अधिक लाभकारी सिद्ध हुआ है।

७—झुककर पढ़ना, लेटे-लेटे पढ़ना, पेटके बल पढ़ना, बिना आंखों की सफाई किये पढ़ना। अधिकांश विद्यार्थी परीक्षा के दिनों में रात्रि को पढ़ते है, परन्तु बिना आँखों की सफाई किये ही पढ़ने लग जाते हैं।

८—आंखोंके दूखने पर, काजल, अंजन, सुरमा तथा ऐसी अनेक दवाइयां प्रचलित हैं, जिनसे लाभ की जगह हानि अधिक होती है। गांव की बुढ़िया का काजल और अञ्जन से आंखें खराब होती हैं। डाक्टरों की दवाइयां और चश्मे भी आंखों के खराब करने में सहायक हैं।

९—आंखों को बिना विश्राम दिये १०-१२ घण्टे पढ़ना लिखाना। प्रकृति ने आंखो के विश्राम के लिए पलकों को बनाया है। हम उस पर ध्यान नही देते हैं। प्रारम्भ में इसका पता नहीं चलता है, परन्तु जब आंखों से अधिक काम लिया जाता है और विश्राम नहीं मिलता है, तो आंखों की दृष्टि कमजोर हो जाती है। पढ़ते या लिखते समय बार-बार पामिंग क्रिया के द्वारा आंखों को विश्राम देना चाहिए।

१०—पढ़ते या लिखते समय बिजली का प्रकाश पीछे की ओर से आना चाहिए, सामने की रोशनी का प्रभाव आंखों पर गलत पड़ता है।

११-ग्रहण देखने से भी आंखें खराब होती हैं। ग्रहण को कभी न देखें।

१२-वेजीटेबिल घी, मैदा आदि की बनी वस्तुओं के प्रयोग से आंखें खराब होती हैं।

१३-अधिक नमक, मिर्च, मसाले का प्रयोग करने से भी आंखों की रोशनी कम होती है।

१४–सिनेमा देखने वालों की आंखें खराब रहती हैं। सिनेमा से आंखें जो खराब होती हैं, उसका ज्ञान शायद ही किसी को होता हो।

१५–आंखों के खराब होने का एक कारण विषयोपभोग भी है। जब कभी कोई नव-युवक किसी सुन्दर युवती या बालिका को कुदृष्टि से देखता है, उस समय उसके मन पर एवं समस्त शरीर पर एक कामशक्ति की लहरसी दौड़ जाती है। जिसके कारण मन दूषित होता है। मन के दूषित होने पर आंखों की रोशनी कम हो जाती है। क्योंकि देखने का काम आंखों का नहीं मन का है, आंख तो केवल यन्त्र-मात्र है। इसलिए अपने मन को सदाचारी रखना चाहिए।

१६–छोटे-छोटे बच्चों की आंखों में शौकिया धूप के चश्मे एवं प्लास्टिक के चश्मे लगा दिये जाते हैं जिनके रंग का प्रभाव आंखों पर पड़ता है। ऐसे चश्मों का व्यवहार कभी न करें।

१७–तेज रोशनी को कभी न देखें, यदि रोशनी सामने आ जाय तो आंखों को बन्दकर लें।

१८–एक वर्ष तक के बच्चे को तेज धूपमें लेकर न चलें यदि चलना ही पड़े तो कपड़े से ढक लें।

१९–तेज धूप में चलने पर सिर पर तौलिया रख लेनी चाहिए। पानी में भिगोकर रखने से और भी अच्छा रहेगा। इससे आंखों को शीतलता प्राप्त होती है।

२०–आंख को धुआं, धूल, गर्द में खोले रहने से आंखें खराब हो जाती हैं।

२१–किसी भी वस्तु को बहुत जोर लगाकर देखना या बहुत दूर तक निगाह डालने से, आंखों की नाड़ियों पर तनाव पड़ने से आंखों की रोशनी कम हो जाती है और लगातार यदि विश्राम न मिला और तनाव बना रहा तो धुंधलापन दिखाई पड़ने लगता है और रोशनी कम पड़ जाती है।

२२–किसी बन्द कमरे में जहां हवा न जाती हो वहां प्रायः रहने से आंखों के सामने निरन्तर वही दृश्य छाया रहता है, इससे आंखों की शक्ति कमजोर हो जाती है।

२३–हर समय चश्मा लगाये रहने से उन्हें विश्राम न देने से रोशनी कमजोर हो जाती है।

२४–दूसरे व्यक्ति का चश्मा लगाने तथा बगैर आवश्यकता के शौक के लिए चश्मा लगाने से आंखें खराब हो जाती हैं और फिर बिना चश्मा लगाये चैन ही नहीं पड़ता है।

२५–भययुक्त चित्र देखना, मानसिक चिन्ता और सिर में दर्द रहना या रुसी आदि

पूर्व प्रकाशित से आगे —

卐 निजानुभूतियाँ 卐

श्री महेन्द्रनारायणसिंह बरैनी, कछवा मीरजापुर

श्री सद्गुरुदेव की अलौकिक कृपायें

अनादि काल से इस आर्य वसुन्धरा के महासिद्ध योगी महात्मा अपनी दिव्य योग शक्ति द्वारा इस जगत को परम कल्याण का मार्ग बताते व दर्शाते आ रहे हैं। उनकी योग शक्ति की कथाओं से भारत के अनेकों धर्मग्रन्थ भरे हुये हैं। आज के भौतिकवादी वैज्ञानिक युग में भी भारतवर्ष के महान योगीजन अपने यौगिक चमत्कारों द्वारा अब भी कभी-कभी दुनियां को आश्चर्य में डाल देते हैं। सभ्य कहे जाने वाले पश्चिमी देशों के निवासियों में भी दिनों दिन योग विद्या के प्रति आकर्षण में वृद्धि हो रही है। यूरोप तथा अमेरिका के विभिन्न देशों में योग प्रचारार्थ कई संस्थायें कार्य कर रही हैं। वहां के अनेकों निवासी अपना द्रव्य तथा अमूल्य समय व्यय करके योग के सम्बन्ध में अपनी जिज्ञासा शान्त करने के लिए प्रायः भारतवर्ष में आया करते हैं। किन्तु योग विद्या के कुछ अर्धज्ञानी भारतीयों द्वारा उक्त क्रिया का व्यापारिक दुरुपयोग करने के कारण इस देश के अधिकांश निवासी अपनी

[पिछले पृष्ठ का शेष]

रोग होने पर आंखें खराब हो जाती हैं।

२६–ब्रह्मचर्य की कमी, अत्यधिक विषय भोगों की आसक्ति से मस्तिष्क शुद्ध नहीं रहता है और तनाव पड़ता है। जिसके कारण रोशनी कमजोर हो जाती है।

२७–खेसारी का सत्तू आंखों के लिए अत्यन्त हानिकारक है। गर्मी बरसात में तो खुले मैदान में सोना चाहिए। बन्द कमरे में पंखा चलाकर सोने से स्वास्थ्य की हानि होती है। मुंह ढककर कभी न सोयें, मच्छरों से बचने के लिए मच्छरदानी का प्रयोग करना चाहिए। पैर के तलवों में सरसों के तेल की मालिश करने से आंखों की रोशनी बढ़ती है। मस्तक आंखों में गाय के घी की मालिश करना चाहिए। यदि रात्रि में आंख खुल जाय तो कुल्ला करके आंखों को धोकर ही सोना चाहिए। बिना आंखें धोये सो जाने से आंखों में गन्दगी जम जाती है। —क्रमशः

उस प्राचीन अमूल्य निधि से विमुख होते जा रहे हैं अपने उन भूले हुये भाईयों के सेवार्थ गुरु-चरण कृपा से लिखे गये इस छोटे से ग्रन्थ में बनारस मिर्जापुर जिलान्तर्गत विभिन्न स्थानों में अनेकानेक देवियों तथा सज्जनों पर परम सद्गुरुदेव योग योगेश्वर आनन्द कन्द श्री चन्द्र मोहन जी महाराज द्वारा हो रही योग शक्ति की अनेकों चमत्कारी लीलाओं में से कुछ का संक्षिप्त वर्णन करने का प्रयास कर रहा हूँ। जिससे लोग जान सकें कि अपने पूर्वजों की यह योग विद्या कितनी शक्तिशाली एवं कल्याण कारी है तथा आज भी योग विद्या की अपरिमित शक्ति से परिपूर्ण महान विभूतियां छिपे भेष में लोगों के बीच रहकर उनका कितना कल्याण कर रही है।

अनन्य कोटि योग योगेश्वर परम कृपा निकेतन मेरे परम सद्गुरु द्वारा अपनी शरण में गये लोगों भक्तों एवं अपने बच्चों पर हो रही असीम कृपाओं का मुझ मन्द मति द्वारा वर्णन करना असम्भव है। कितने ऐसे अज्ञस्त रोगी शरण में आते हैं जिनको कृपा प्रसाद प्राप्ति द्वारा कार्य सिद्ध हो जाने पर नाम पता न ज्ञात होने के कारण तथा देवियों की गुप्त प्रार्थना पर उनका चरण रज प्रसाद द्वारा संकट दूर होना तथा कितनी रहस्यमय समस्याओं पर अज्ञात कृपाओं का पता न होने के कारण बहुत सी घटनायें गुप्त रह जाती हैं। हां जब ऐसी गुप्त कृपाओं के भाग्यशाली प्राप्त कर्ता साल दो साल बाद श्री प्रभु जी की शरण में आकर चरणों में पत्र पुष्पादि भेंट करते हुये कहते हैं कि नाथ की कृपा से सब असम्भव समस्यायें पूर्ण हो गयी, यदि आपकी चरण शरण न मिली होती तो कहीं का भी न रह पाता, तो स्मरण हो आता है कि ये सज्जन या देवीजी अमुक स्थान सपत्नीक या पति सहित या अकेले ही गुरु शरण में आकर एकांत में निवेदन करना चाहते थे। इस कारण हम सभी को दूर हट जाना पड़ा था, ऐसी अज्ञात घटनाओं को किस रूप में लिखा जाय? अनाथ नाथ की कुछ ऐसी गुप्त कृपायें होती हैं जिनका रहस्यभेदन बद्ध किया जाना कृपा प्राप्त कर्ता के लिए भी संकोच में पड़ जाने का कारण बन सकता है, ऐसी घटनाओं को गुप्त रखना ही उत्तम होगा। हां जो कृपायें सर्वसाधारण पर प्रकट हैं जिन्हें प्रकाशित करने में घटनाओं से सम्बन्धित सज्जनों को किसी प्रकार संकोच का अनुभव नहीं उन्हीं में से कुछ एक को उद्धृत करने का प्रयास करूंगा।

श्री गुरुदेव जी के आशीर्वाद से सभी सन्तानें जीवित

मेरे द्वितीय सहोदर भाई श्री गोविन्द नारायण जी उत्तर प्रदेश सरकार के रोजगार विभाग में कार्य करते हैं। परम सद्गुरु भगवन की चरण शरण पाने के पूर्व उनकी सभी

सन्तानें उत्पत्ति के पश्चात् छः वर्ष से दो माह की अल्पायु में ही काल कवलित हो गई थी।

ज्योतिषियों ने बताया कि ये सन्तान विहीन रहेंगे। गुरुदेव के बरैनी आगमन के समय गोविन्द नारायण के दो पुत्र थे, एक ढाई वर्ष का तथा दूसरा १८ दिन का पिछली संतानों की मृत्यु एवं ज्योतिषियों की भविष्यवाणी के कारण इन दोनों बच्चों के लिए मन में भय बना रहता था। अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड नायक योग-योगेश्वर परम सद्गुरु देवजी बार-बार विनय पूर्वक प्रार्थना करने पर गत ३ फरवरी सन् १९६१ ई० के शुक्रवार को प्रथम बार अपने इस दीन-हीन दासानुदास की झोंपड़ी को बरैनी में पधार कर पवित्र करने की अनुकम्पा प्रदान की दयानिधि के पधारने के पूर्व ही आस-पास के क्षेत्रों में बिजली की भांति यह समाचार फैल गया कि सिद्धगुफा सवांई आगरा के एक बड़े ही सिद्ध महात्मा बरैनी ग्राम में आने की अनुकम्पा किये हैं जो बिना औषधि सेवन कराये ही योग साधनों द्वारा साध्य, असाध्य रोगों से छुटकारा दिला देते हैं। फिर क्या था? प्रभु के पदार्पण के दूसरे दिन ही दर्शनार्थियों, जिज्ञासुओं, रोगियों का तांता सा लगगया दयानिधि सभी की प्रार्थनायें सुनतेजाते किसी को योगासन, नेति नाक द्वारा दुग्ध पान जीवन तत्व क्रिया तथा किसी को रज प्रसाद, किसी को पुष्प प्रसाद तथा किसी को आशीर्वाद मात्र से ही संतुष्ट कर देते थे। लोगों पर बड़ी ही चमत्कारी कृपायें हुई। जीवन से निराश कितने ही शारीरिक मानसिक रोगी चंगे हो गये। मृगी, राजयक्ष्मा उन्माद, पागलपन, धातु सम्बन्धी कठिन रोगों से कितनों को छुटकारा मिला। यह सब आश्चर्यमय कृपा लीलायें देखकर मेरे घर की स्त्रियों को भी कुछ लालच आया। एक मेरी धर्मपत्नी ने मुझसे कहा कि दूर-दूर से लोग आकर गुरु चरणों में निवेदन करके अपने दुःखों से छुटकारा पा रहे हैं। गोविन्द नारायण के बच्चों के लिए आप भी श्री गुरुदेवजी से प्रार्थना करिये शायद उनकी अलौकिक कृपा से ये बच्चे रह जावें पर धर्मपत्नी की यह बातें मुझे कम जची, कारण गत् १९६० ई० में प्रयाग में प्रथम बार मुझे जब देवाधिदेव श्री गुरुदेवजी का चरण दर्शन प्राप्त करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, उस समय मैं शारीरिक एवं असाध्य रोगों से ग्रस्त था। आयुर्वेदिक, होम्योपैथिक एवं एलोपैथिक चिकित्सायें करके निराश हो चुका था। गत १३ वर्षों से प्राकृतिक चिकित्सा करके किसी प्रकार पानी में उबली सब्जी एवं रोटी खाकर जीवन रूपी गाड़ी चला रहा था। अपने मानसिक रोग के लिए देश के ख्याति प्राप्त मनोवैज्ञानिकों की सलाह पर चलकर निराश हो चुका था। साथ ही गत् २१ वर्षों से धर्म विहीनता, अनीश्वर वाद आदि कोढ़

में खुजली जैसे भयंकर कुविकारों से ग्रसित था साधु महात्माओं के नाम से तो चिढ़ सी थी। प्रयाग में अहेतुकी कृपा के दाता की शरण में जाकर गर्वपूर्वक श्रद्धा विहीन होकर दूर से नमस्कार करके बैठ गया था। ऐसे 'अशिष्टता पूर्ण व्यवहार पर भी कृपानाथ ने पलक मारते ही मेरा मानसिक रोग तुरन्त हर लिया उसी क्षण मन में धार्मिकता का बीजारोपण भी कर दिया तथा शारीरिक व्याधि में तीसरे दिन से न्यूनता आने लगी। इन कारणों से मेरे मन में विश्वास जग गया कि सांसारिक भेष में ये साक्षात् परब्रह्म ही हैं। धर्मपत्नी से मैंने कहा कि अनेकों प्रार्थना पत्र सेवा में अर्पित करने के पश्चात् किसी प्रकार अपनी झोंपड़ी में ही गुरु चरण दर्शन एवं सेवा करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। अब अपने क्षुद्र-स्वार्थों की पूर्ति के लिए प्रार्थना करूं? वे अन्तर्यामी सर्वज्ञ हैं जो उचित एवं लाभप्रद होगा, अपने बच्चों के लिए बिना प्रार्थना किये ही कृपा-पूर्वक कर देंगे तुम व्यर्थ की चिन्ता में क्यों पड़ी हो? दयासिन्धु के समक्ष कुछ कहने का मुझे साहस भी तो नहीं होता। इस वार्तालाप के पश्चात् दूसरे दिन १० बजे का समय था। आरती पूजन वाले कमरे में २॥ वर्षीय आशुतोष को गोद में लिये खड़े-खड़े मैं किसी महानुभाव से बातें कर रहा था। सहसा अपने निवास के ऊपर वाले कमरे से श्री प्रभुजी का पदार्पण हुआ। आते ही गुरुजी ने मुझसे प्रश्न किया कि यह गोद का बच्चा तुम्हारा है। मैंने विनम्रता पूर्वक कहा कि यह मेरे भाई श्री गोविन्द नारायण का बच्चा है। फिर प्रश्न हुआ तुम्हारे, कितने बच्चे हैं? मैंने प्रार्थना की कि हे दीनबन्धु आपके इस दासपर कोई बच्चा नहीं है। प्रभुजी ने कुछ आश्चर्य से पूछा कि एक भी बच्चा नहीं है। मेरे स्वीकारोक्ति पर श्री चरणों से आज्ञा हुई अच्छा, प्रभु का चिंतन किया कर। श्री मुख से निकली इस वाणी का अर्थ समझते ही मुझे भय सा लगा। मुझ मन्द-मति समझ गया कि कुछ समय पश्चात् कृपा निकेतन मेरे लिए बच्चों की कतार खड़ी कर देंगे। मैंने छूटते ही निवेदन किया कि हे सर्व-शक्ति मान परम प्रभु आपकी अपरिमित कृपाओं से इस अकर्मण्य दास के मन से पिता होने की लालसा दूर कर दी है। मन में बच्चों के प्रति केवल यही भावना है कि भाइयों के बच्चे रह जांय।

मेरे गोद में लिये हुये बालक के कई भाई बहनें असमय में ही गत् हो गये इससे इसके लिए भी मन सदा भयाक्रान्त रहता है। मेरी प्रार्थना सुनकर भक्त भव भयहारी ने कुछ क्षण के लिए अपने नेत्रों को मूंद लिया फिर लड़के के सिर को सहलाते हुये यह आशीर्वचन कहे 'यह रहेगा, यह रहेगा'। हम सबों को मनोवांछित फल की प्राप्ति हुई। वह आशुतोष नामक बालक इस समय ११ वर्ष १९६९ ई० में प्राथमिक विद्यालय के ५ वीं की वार्षिक परीक्षा में परीक्षा केन्द्र में आये सभी विद्यालयों के सभी परीक्षार्थियों में सबसे अधिक अङ्क प्राप्त करके उत्तीर्ण हुआ है तथा इसके पश्चात् भी श्री गोविन्द नारायण जी की पत्नी को जितने बच्चे उत्पन्न हुये हैं गुरुदेव के आशीर्वाद से सभी सानन्द उपस्थित हैं।

—क्रमशः

पूर्व प्रकाशित से आगे—

योग चिकित्सा

❀ श्री गिरीशदेव वर्मा

नौलि क्रिया

ब्रस्ति क्रिया के प्रसंग में बता आये हैं कि आंतों में पानी चढ़ाने के बाद उसे रोकें और खड़े होकर नौली कर डालें। पेट का कितना भी भयंकर रोगी हो, नौली के अभ्यास से ठीक हो जाता है। नौली योग की एक अद्भुत क्रिया है जिसके लाभ का वर्णन नहीं किया जा सकता। यदि शौच के बाद भोजन सुधार के साथ-साथ नौली का अभ्यास प्रतिदिन कर लिया जाया करे तो पेट का कोई रोग नहीं हो सकता। इसके अभ्यास से पेट रुई की तरह मुलायम हो जाता है। गैस, लीवर, तिल्ली, सुगर, स्वप्न दोष तथा माहवारी के रोगों में यह क्रिया रामबाण है।

नौली क्रिया को सही ढंग से सीख कर अभ्यास करना चाहिए। पुस्तक में पढ़कर क्रिया करने से हानि की सम्भावना रहती है। किसी योग केन्द्र में रहकर इस क्रिया को सीख लेना चाहिए। नौली के पहले उड्डियान बन्ध सिद्ध कर लेना चाहिये।

× × ×

करने की विधि—

नौली सिद्ध करने के लिए सर्व प्रथम लंगोटा या जांघिया को नाभि से लगभग ६ अंगुल नीचे कर लेना चाहिये। इस क्रिया में जाँघों की मालिश करनी पड़ती है। अतः जांघों पर तेल लगा लेना चाहिये, अन्यथा बालतोड़ हो जाने का डर रहता है। अब ऐसे खड़े हो जांय कि पैरों के बीच अर्थात् एड़ी से एड़ी का अन्तर लगभग एक बालिश्त हो और अंगूठे से अंगूठे का अन्तर लगभग डेढ़ बालिश्त रहे।

(१) घुटनों को आगे की ओर झुकाइये। घुटनों से थोड़ा ऊपर हाथों को मजबूती से रखिये। अब पेट को धीरे-धीरे अन्दर बाहर सिकोड़िये और छोड़िये। इस क्रिया को ५० बार से लेकर १०० बार तक करिये। जब इच्छा हो श्वांस लीजिये, जब इच्छा हो श्वांस छोड़िये। इसको उप नौली भी कहते हैं। उप नौली के अभ्यास से नौली जल्दी बनती है। खड़े होने का तरीका निम्न चित्र के अनुसार रहेगा।

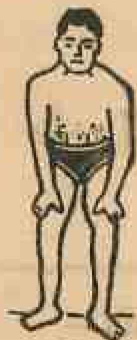

नौलि

(२) अब गहरी श्वांस नाक से भरिये और मुख को थोड़ा खोल कर अर्थात् चोंच बनाकर पूरी श्वास को बाहर निकाल दीजिये और बाहर ही रोकिये। अब पेट को अन्दर की तरफ खींचिये और रीढ़ की हड्डी से मिलाने का प्रयास कीजिए। जब श्वास बाहर न रोक सकें तब धीरे धीरे श्वास नाक से भरिये। इस क्रिया को पांच मर्तबा से लेकर ५० मर्तबा तक करिये। इस क्रिया को उड्डियान बन्ध कहते हैं। जितना अच्छा और जितनी देर तक उड्डियान बन्ध सिद्ध कर लेंगे नौलि उतनी ही सुन्दर और अच्छी चलेगी।

(३) नौलि चलाने के लिए उड्डियान बन्ध करके उपनौली की तरह घुटनों को आगे की ओर झुकाइये। अब हथेली के बीच के भाग से जांघों पर हल्का दाब डालकर धीरे-धीरे बारी-बारी से पूरी मालिश करें, अर्थात् दायें हाथ को जाँघ के नीचे ले जायें तो बांये हाथ को ऊपर और फिर बांया हाथ नीचे तो दांया हाथ ऊपर और फिर बांया हाथ नीचे तो दांया हाथ ऊपर। इस प्रकार के करने से पेट के नल चक्की की तरह अपने आप चलने लगते हैं। ध्यान रहे मालिश करते समय अंगूठे जाँघ के अन्दर की ओर रखें। शेष चारों उंगलियों को आपस में मिलाकर जाँघ के बाहर रखें। इसी प्रकार दोनों हाथों को एक साथ ऊपर से नीचे तक पूरे में मालिश करेंगे तो पेट के बीच का हिस्सा चलेगा। इसे बीच की नौलि कहते हैं। हाथों को जाँघों के बीच में रखकर बारी-बारी से अंगूठे से वहीं दबायेंगे तो विभाजित नौलि चलेगी। इतना अभ्यास पक्का कर लेने के बाद गोल नौली भी चलने लगेगी।

ठण्डे पानी की पट्टी

प्रातः काल शौच के बाद या खाली पेट दोपहर में अर्थात् खाने के ३ घण्टे बाद अथवा रात को सोते समय (यदि भोजन दो घण्टे पूर्व किया गया हो तो) पेड़ू पर ठण्डे पानी की पट्टी आधा घण्टा तक नियमित रूप से रखने से कुछ ही दिनों में कमजोर आँतें ताकतवर हो जाती हैं। घबड़ाहट और गैस की तकलीफ में इस क्रिया से तुरन्त लाभ होता है। दस्त, बुखार, अथवा पेशाब बन्द हो जाने पर १५-१५ मिनट की उपरोक्त पट्टी दो या तीन बार रखने से चमत्कारी लाभ होता है। किसी

अंग विशेष के कष्ट में जैसे दांत दर्द, कान दर्द, पेशाब की जलन में उसी स्थान पर ठण्डे पानी की पट्टी बार-बार रखने से दर्द और जलन बिल्कुल शान्त हो जाता है।

इस क्रिया को सुविधापूर्वक करने के लिए एक विशेष प्रकार की रबड़ की पट्टी आती है जिसे किसी योग केन्द्र से प्राप्त किया जा सकता है।

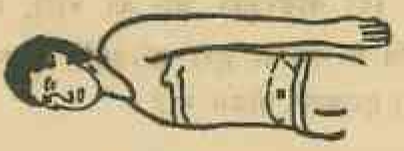

पेट पर रबड़ की पट्टी

रखने की विधि—

आयताकार रबड़ की पट्टी का ढक्कन खोल कर लगभग ८० ग्राम बरफ फोड़ कर उसमें भर दें। ऊपर से थोड़ा पानी डालकर ढक्कन बन्द कर दें। अब नाभि के नीचे पेड़ू पर एक निचोड़ा हुआ गीला कपड़ा रखकर उसके ऊपर रबड़ की थैली रख दें। चित्र के अनुसार लेटकर १५ मिनट तक पट्टी को पेड़ू पर रखे रहने दें। फिर दो मिनट के लिए पट्टी हटा दें, फिर उसी प्रकार रख दें। इस प्रकार आधा घण्टा तक पेड़ू को ठण्डा करें।

रबड़ की थैली में ठण्डक सहन-शक्ति के अनुसार रखें। पट्टी हटाने के बाद निर्बल रोगी ऊपर से कम्बल या मफलर से पेड़ू को कुछ देर ढके रखें। स्वस्थ व साधारण रोगी व्यायाम आदि से गर्मी पहुँचायें तो लाभ बहुत जल्दी होगा। इस पट्टी के अभाव में किसी छोटी तौलिया या मोटे कपड़े को बरफ के ठण्डे पानी में भिगो निचोड़ कर बदल-बदल कर बार-बार पेड़ू पर रखें। इससे भी वही लाभ होगा, केवल करने में परेशानी है।

कुछ आवश्यक बातें

समस्त रोगों की जड़ कब्ज व अपच है। पेट का कोई भी रोग बिना भोजन सुधार के ठीक नहीं हो सकता। रोगी की चिकित्सा में जब शुद्धि की क्रियायें कराई जावें तब भोजन सुधार सम्बन्धी नियमों का भी पालन किया जावे।

(१) भूख न होने पर अथवा कम होने पर गुनगुने पानी में आधे नीबू का रस, दो चम्मच शहद मिला कर पी लो। साधारण भूख पर कच्ची सब्जी, रसीले फल, या सब्जी का सूप लो और कुछ नहीं। जब कड़ी भूख लगे तब खाना खाओ और प्रत्येक कौर को खूब चबा-चबा कर खाओ और थोड़ी भूख शेष रहते हुए खाना बन्द कर दो।

(२) पानी खूब पिओ लेकिन भोजन के साथ बहुत थोड़ा। भोजन के एक घण्टे पहले या एक घण्टे बाद पानी पीना ठीक रहता है।

(३) भोजन के तुरन्त बाद पाँच मिनट

बांये करवट लेटकर विश्राम करो या पांच मिनट वज्रासन में बैठो ।

(४) भोजन केवल दो बार करो। बार-बार खाने से गैस बनने लगती है। रात को दूध पीकर सोना बड़ी बुरी आदत है। शौच दो बार अवश्य जांय ।

(५) चाय से एसिडिटी (अम्ल) बढ़ जाती है अतः चाय की आदत छोड़ देनी चाहिये। यदि कुछ पीने की इच्छा बनी रहती हो तो तुलसी की चाय या जड़ी बूटियों की चाय अपने घर बनाकर पिओ।

(६) चाय, बिस्कुट, पेस्ट्री, टोस्ट, मक्खन का नाश्ता स्वास्थ के लिए हितकर नहीं है। इनके स्थान पर फल, दूध, दही, का या अंकुरित चना का सेवन करना चाहिए।

(७) खराब तेल, डालडा की तली चीजें अंडा, माँस, मछली, शराब, गाँजा भाँग, बीड़ी सिगरेट, तम्बाकू आदि वस्तुओं का पूर्ण बहिष्कार करो।

(८) दालें पेट को, सफेद चीनी खून को और नमक गुर्दे को जल्दी खराब करते हैं। इनका प्रयोग जितना कम हो सके किया जावे।

(९) चोकरयुक्त आटे की रोटी, सादी रीति से पकायी हरी सब्जियाँ, सलाद, व मट्ठा गुणकारी भोजन में हैं।

(१०) यदि कभी किसी कारण से पेट में गड़बड़ी हो जाय तो उस दिन उपवास कर कर डालना चाहिए। उपवास के दिन बस्ति व गणेश क्रिया जरूर करें।

प्रभु - मिलन की उत्कण्ठा से
कभी - कभी तो मैं इन्सानों के बीच से उठ जाता है।
और पंक्षियों में जा बैठता हूँ।
उनसे कहता हूँ :
तुम धरती छोड़ आसमान में उड़ने वाले हो,
तुम्हें प्रभु का दर्शन जरूर हुआ होगा।
बतलाओ, हमारे घर पंढरी के पाहुने कब आने वाले है ?
तुम्हें मुँहमांगा इनाम दूंगा।
वे कहते हैं—
हमें तेरा कुछ नहीं चाहिए।
कब मिलेंगे--वह तुझे अपने हृदय में ही मालूम होगा ! —ज्ञानदेव

सिद्धयोग में—

सिद्धानुशासन की अपरिहार्यता

☼ डा० श्री विजयसिंह, गोरखपुर

जीवन के विकास में, जैसे बालक का माता-पिता के अनुशासन में रहना आवश्यक है वैसे ही सिद्धयोग के साधकों को श्री गुरुदेव के अनुशासन में रहना अति आवश्यक है। अन्यथा साधना अपूर्ण रह जावेगा। सिद्धयोग में साधक का अन्तर विकास श्री गुरुदेव की कृपा एवं क्रिया-शक्ति से फलित हुआ करता है। भगवान शंकर जी श्रीगुरु गीता में उपदेश करते हुए कहते हैं—जिसे पूर्ण ब्रह्म-तत्त्व को उपलब्ध होना है उसे किसी भी दशा में श्री गुरुदेव का लोप नहीं करना चाहिये। सारी साधना श्री गुरुदेव की प्रसन्नता एवं सन्तोष से शीघ्र फलित हो उठता है। सिद्धयोग को इसीसे विहंगम्-योग भी कहा गया है। सिद्ध-योग की अमर दीक्षा प्राप्त करने वाला शनैः-शनैः सिद्धता की ओर अग्रसर होता रहता है। अन्ततोगत्वा उसे सिद्ध बनना ही है। ऐसे साधकों का अन्तर-विकास अनेक विलक्षण-ताओं, अलौकिकताओं से भरा रहता है। वह कोटिजनों से अपने को अलग-थलग महसूस करता है। परन्तु जागतिक व्यवहार में, बिना अन्तःप्रेरणा के उन विलक्षणताओं का अकारण प्रदर्शन, पतन का कारण बन जाया करता है। अतः साधक को सिद्धजनों ने सदैव—अति जगत चर्चा, लोक निंदा, अविवेक, घमण्ड, द्वेष, अपवित्रता, असत्याचरण, होटल के अशुचि अन्न जैसी वस्तुओं में रुचि, कुसंग से बचे रहने का उपदेश किया है। क्योंकि यह सभी दोष अन्तर-शक्ति के वेग को कम करते हैं। यहां 'योगी की आत्म कथा से' एक प्रसंग दिया जा रहा है जो कि उपरोक्त बातों को स्पष्ट चित्रित करने वाला है। योग साधना में साधक को अवश्य ही अपने जीवन को उपरोक्त आदर्शों के अनुकूल ढालना चाहिए। अन्यथा संगदोष का भयंकर अन्तराय योग-भ्रष्ट कर देता है। क्योंकि अहंकार सबसे सूक्ष्म, साधना का अन्तराय है। अतः यहां इसी परिप्रेक्ष में मुकुन्द के गुरु-आश्रम का जीवन वृत्त देखना चाहिए।

मुकुन्द को जब पढ़ते समय ग्रीष्मावकाश प्राप्त हुआ तो उसने अपना समय श्रीगुरुदेव के

सानिध्य में व्यतीत करना चाहा। वह श्रीरामपुर आश्रम में सोत्साह पहुँचा। श्री युक्तेश्वर जी अत्यन्त प्रसन्न हुए और बोले—आश्रम का सारा कार्य-भार तुम्हें सम्भालना होगा। अतिथियों के स्वागत और अन्य शिष्यों के कार्यों के निरीक्षण का उत्तरदायित्व तुम पर होगा।

लगभग एक पखवारे के बाद, पूर्व बंगाल से कुमार नामक एक तरुण शिष्य आश्रम में योग दीक्षा प्राप्त करने आया। अत्यन्त मेधावी होने के कारण वह शीघ्र ही श्री युक्तेश्वर जी का प्रियपात्र बन गया। किसी अगम्य कारण से इस नये शिष्य के प्रति गुरु जी की आलोचक वृत्ति भी शिथिल रही।

कुमार के आश्रम प्रवेश के लगभग एक माह बाद युक्तेश्वर जी ने मुकुन्द को आदेश दिया—मुकुन्द, अब कुमार तुम्हारा काम संभालेगा और तुम अपना समय झाड़ू तथा रसोई आदि के काम में लगाओ।

पदोन्नति पाकर कुमार आश्रम का एक छोटा-मोटा स्वेच्छाचारी शासक बन गया। मूक विद्रोह के रूप में अन्य शिष्य मुकुन्द के पास परामर्श लेने लगे। यह स्थिति लगभग एक माह तक चलती रही। उसके बाद अचानक एक दिन युक्तेश्वर जी के तथा कुमार के बीच हो रहे वार्ता का कुछ अंश मुकुन्द ने सुना। कुमार गुरुजी से कह रहा था—मुकुन्द तो असाध्य है। आपने मुझे निरीक्षक नियुक्त किया है, परन्तु अन्य शिष्य उसी की बातों पर ध्यान देते हैं और उसको ही सुनते हैं।

श्री युक्तेश्वर जी का उपेक्षित व कठोर स्वर जो मुकुन्द के लिए सर्वथा नया था सुनाई पड़ा, यही कारण है कि मैंने उसे रसोई-घर का और तुमको बैठक खाने का काम सौंपा, ताकि तुम समझ सको कि योग्य नेता में केवल सेवा करने की आकांक्षा होती है, शासन करने की नहीं। तुम मुकुन्द की जगह चाहते थे, परन्तु तुम अपने गुणों द्वारा उसे सम्भाल नहीं सके। अतः अब तुम पहली जगह पर वापस जाओ और पुनः रसोइये के सहायक के रूप में काम करो। गर्व-हरण की इस घटना के बाद श्री युक्तेश्वर जीने पुनः पहले की भांति अकारण सदय होने की वृत्ति अपना ली। गुरुओं की व्यक्तिगत विलक्षणतायें भी शिष्य की जीवन-धारा को विविध रंगी विचित्रतायें प्रदान करती हैं। मुकुन्द का मन छोटी-मोटी घटनाओं से प्रभावित नहीं होता था। उसे श्री युक्तेश्वर जी से बाहरी प्रशंसा की अपेक्षा कहीं अधिक मूल्यवान लाभ प्राप्त करने की आकांक्षा थी।

एक दिन अकारण कुमार मुकुन्द से उलझ गया तथा कटु वचन बोलता रहा जिससे उसे

मानसिक व्यथा हुई। उसने अन्तः प्रेरणा से प्रेरित होकर कुमार को चेतावनी दी–तुम्हारा दिमाग घमण्ड से फूल कर फटना चाहता है। यदि तुम्हारी यही रीति-नीति रही तो हो सकता है तुम्हें आश्रम को छोड़ कर जाना पड़े। कुमार ने व्यंग्य की हँसी हँसते हुये मुकुन्द के शब्दों को दुहराते हुये श्री युक्तेश्वर जी को सुना दिया। श्री युक्तेश्वर जी अकारण वहाँ आ पहुँचे थे। डाँट पड़ने की प्रतीक्षा करते हुये मुकुन्द सकपका कर एक कोने में बैठ गया।

सम्भव है, मुकुन्द की बात ठीक हो। श्री युक्तेश्वर जी के शब्दों में असाधारण शुष्कता थी।

एक वर्ष बाद कुमार श्री युक्तेश्वर जी की मौन अस्वीकृति की अवहेलना कर अपने गांव चला गया। गुरुदेव अपने शिष्यों की गतिविधियों पर अनावश्यक अधिकार नहीं प्रदर्शित करते थे। जब वह कुछ महीनों बाद लौटकर आश्रम में आया, तब उसमें स्पष्ट रूप से एक अप्रिय परिवर्तन दिखलाई पड़ा। आकर्षक और तेजस्वी चेहरे वाला कुमार एक साधारण किसान जैसा तथा कई बुरी आदतें अपना कर लौटा।

गुरुजी मुकुन्द को बुलाकर बोले—मुकुन्द, कल ही कुमार को आश्रम छोड़कर चले जाने को कह देने का काम मैं तुम्हें सौंपता हूं। मैं स्वयं नही कह सकूंगा। यदि इस लड़के ने मेरा कहना मान लिया होता और गांव जाकर संग दोष से ग्रसित न होता तो आज इसका इतना पतन न होता। इसने हमारे संरक्षण का परित्याग कर दिया है। अब कठोर संसार ही इसका गुरु रहेगा।

× × ×

मनुष्य में सुरा और सुन्दरी के उपभोग की स्वाभाविक लालसा रहती है। तृप्ति और आनन्द की प्राप्ति के लिये लोग अन्धों की तरह हजारों दिशाओं में बाहर भटकते हैं। जबकि आनन्द का उद्गम अन्तर प्रदेश में ही छिपा है। श्री युक्तेश्वर जी कुमार की तीक्ष्ण बुद्धि की चर्चा करते हुए कहा करते थे बुद्धि एक दुधारी तलवार है। इसका उपयोग रचनात्मक और विनाशात्मक, दोनों विधियों से किया जा सकता है। चाहे तो छुरी की तरह उससे अज्ञान के फोड़े को चीर डालो, या चाहो तो अपनी गर्दन काट लो। आध्यात्मिक नियमों की अपरिहार्यता को स्वीकार कर लेने के बाद ही बुद्धि सही मार्ग पर चल सकती है।

卐

शक्तिपीठ और सिद्धपीठ

श्री केशव उपाध्याय, वाराणसी

कानपुर का योग-प्रचार कार्यक्रम

गुरुदेव भगवान के विशेष कृपापात्र आदरणीय गुरुभाई श्री सुरेशचन्द शर्मा का निवास स्थान। सामने का लान (फर्श) जो विभिन्न प्रकार के टेन्टों और बिजली के बल्बों तथा फूल-मालाओं से सजावट करके श्री प्रभु जी के योग-प्रचार कार्यक्रम हेतु बड़ा ही मनोहर, भव्य एवं सुन्दर बनाया गया है। सामने हमारे दादा गुरुदेव योग-योगेश्वर अनादि सिद्ध परम करूणानिधि श्री महाप्रभु जी का सिंहासन बनाया गया है जिसपर श्री महाप्रभु जी का विशाल स्वरूप सुशोभित है। बगल में हम सबके आराध्य देव, परमकरुणा सागर योग-योगेश्वर हमारे गुरुदेव भगवान श्री प्रभुजी का दिव्य आसन, जिसपर वे स्वयं अर्धपद्मासन में विराजमान है श्री गुरुदेव भगवान से थोड़ा दूर पर, परम आदरणीया सुश्री उमा बहन अपने आसन पर विराजमान होकर श्री महाप्रभु जी के जीवन से सम्बन्धित यौगिक चमत्कारों से परिपूर्ण सत्य कथाओं द्वारा महिला सतसंग कार्यक्रम का संचालन करती हुयीं योग-जिज्ञासु साधकों को योगामृत पान करा रही हैं। योग-प्रचार मण्डप श्रोताओं से खचाखच भरा हुआ है। योग-प्रचार का महिला सतसंग कार्यक्रम समाप्त होता है और श्री प्रभुजी अपने मुखारबिन्दु से श्री बहन जी की बातों की प्रमाणों द्वारा पुष्टि करते हुये कहते हैं कि: –

तुम्हारे सामने (श्री महाप्रभु जी के स्वरूप की तरफ इशारा करते हुये) यह जो हमारे गुरुदेव भगवान का स्वरूप विराजमान है, यह केवल चित्र या फोटो ही नहीं है, इस स्वरूप में हमारे गुरुदेव भगवान स्वयं उपस्थित हैं और उनकी सब शक्तियां इस स्वरूप में निहित है। इस प्रसंग में श्री मुख ने आगे कहा कि हमारे गुरुभाई श्री नरेसिंहमूर्ति जी (जिन्होंने कुछ वर्षों पूर्व अपना शरीर छोड़ा है) कि एक शिष्या हमारे गुरुदेव के एक स्वरूप के साथ काबेरीमठ के जगत्गुरु श्री शंकराचार्य जी के पास पहुँची और उसने श्री प्रभुजी के स्वरूप को श्री शंकराचार्य जी को दिखलाते हुये प्रार्थना किया "महाराज, इस स्वरूप की विशेषता क्या है?" श्री शंकराचार्य जी ने स्वरूप को कुछ समय तक अपलक नेत्रों

से देखने के बाद उत्तर दिया:- "नारायण स्वयं।" फिर शिष्या ने प्रार्थना की "इनकी महत्ता क्या है ?" श्री शंकराचार्य जी ने उत्तर दिया:—इनका तो कहना ही क्या ? इस स्वरूप (चित्र) की बात मैं तुम्हें बतला रहा हूँ इस स्वरूप में यह ताकत है कि यह एक साथ हजारों प्राणियों को मोक्ष प्रदान कर सकता है।" शिष्या ने अपने गुरुदेव भगवान (श्री नरसिंह मूर्ति जी) के विषय में कुछ जानकारी प्राप्त करने के विचार से शंकराचार्य जी से प्रार्थना की:- "महाराज, हमारे गुरुदेव एक शक्तिपीठ में एक कामना पूर्ति के लिये तपस्या कर रहे है, उनकी वह तपस्या पूर्ण होकर उनकी कामना पूर्ण होगी कि नहीं ?" श्री शंकराचार्य जी ने उत्तर दिया कि:— "उनकी तपस्या तो सफल होगी परन्तु उनकी वह कामना जिसके लिये वे तपस्या कर रहे हैं पूर्ण नहीं होगी। कारण यह है तुम्हारे सब प्रकार परिपूर्ण दादा गुरुदेव अपने शिष्य के परमार्थ को ध्यान में रखते हुये उनकी शक्तिपीठ की साधना और तपस्या का फल किसी दूसरे प्रकार से देंगे। यद्यपि यह बात सत्य है कि "शक्तिपीठ" में की गयी साधना जिस कामना से की जाती है, वह पूर्ण होती है परन्तु सिद्ध योगिराज अपने बच्चों का परमार्थ देखते हुये उनकी तपस्या का फल उन्हें दूसरे प्रकार से प्रदान किया करते हैं।" कुछ श्रोताओं के मन में शक्तिपीठ की जानकारी प्राप्त करने की इच्छा मन ही मन जाग उठी। श्री गुरुदेव भगवान के अपने मुखारबिन्दु से कहना आरम्भ किया:—

त्रेतायुग में एक समय भगवान-शिव ने जगत जननी के साथ कुम्भज ऋषि के पास जाकर भगवान राम को कथा का श्रवण किया और परमानन्द का अनुभव किया। इसके पश्चात् वे अपनी प्रिया दच्छकुमारी जी के साथ जब पवित्र कैलाश पर्वत पर जा रहे थे, उसी समय उन्हें मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान राम के दर्शन हुये जो जगत-जननी मां सीता जी की खोज कर रहे थे। भगवान शिव ने:—

जय सच्चिदानन्द जगपावन,
अस कहि चलेउ मनोज नसावन।

उपरोक्त चौपाई कहकर, बारम्बार पुलकयमान नेत्रों से भगवान राम का दर्शन किया और मन ही मन प्रणाम किया! मां दच्छकुमारी जी को यह सुनकर और देखकर भ्रम पैदा हो गया कि जगत के स्वामी भगवान शिव ने एक राजकुमार को बारम्बार प्रणाम कर उपरोक्त चौपाई का कथन क्यों किया ? भगवान शिव ने अनेक प्रकार से उनका भ्रम दूर करने के लिये उपदेश किया परन्तु उनका भ्रम दूर न हो सका। भगवान शिव ने कहा कि जिस प्रकार तुम्हारा भ्रम दूर हो सके तुम वही उपाय करो! जगत जननी ने सीता मां का वेश बनाकर भगवान राम की परीक्षा

लेना उचित समझा परन्तु जब सामने गयीं तो भगवान श्री राम ने अपने परिचय के साथ ही साथ उनका भी परिचय दे दिया:—

जोरि पानि प्रभु कीन्ह प्रनामू,
पिता समेत लीन्ह निज नामू ।
कहेउ बहोरि कहां बृषकेतू,
बिपिन अकेलि फिरहु केहि हेतू ॥

इसके साथ ही साथ अपनी माया का कुछ और भी प्रभाव दिखलाकर अपना पूर्ण परिचय दे दिया । श्री दच्छकुमारी जी के वापस आने पर जब भगवान शिव के परीक्षा विधि की जानकारी लेनी चाही तो उन्होंने असत्य बात का वर्णन किया । भगवान शिव ने योग-विधि से जब सब बातों की जानकारी कर ली, तो उन्होंने प्रतिज्ञा की कि सती के इस शरीर से प्रेम नहीं करूंगा । तत्पश्चात् भगवान शिव अपनी प्रिया के साथ कैलाश पर्वत पहुँचे । जगत्–जननी ने जब यह जान लिया कि भगवान ने ऐसी प्रतिज्ञा की है तो उन्हें बड़ा ही सोच हुआ ।

उसी समय सती के पिता जी ने अपनी प्रतिष्ठा को उन्नत हुआ समझ कर जग्य करना आरम्भ किया । सभी देवता और उच्चलोकों के निवासियों को उन्होंने आमंत्रित और सभी आकाश मार्ग से उस जग्य में भाग लेने जाने लगे । जगत–जननी ने जब आकाश मार्ग में देवताओं को जाते देखा तो प्रभु से प्रार्थना किया कि ये कहां जा रहे हैं । भगवान शंकर ने बतलाया कि ये सभी देवगण तुम्हारे पिता जी के जग्य में भाग लेने जा रहे हैं । जगत–जननी ने भी उसमें शामिल होने की प्रार्थना की । भगवान शिव ने अनेक प्रकार से समझाकर उनको वहां जाने से मना किया । श्री दच्छकुमारी जी के बार–बार आग्रह करने पर भगवान ने उन्हें अपने मुख्य गणों के साथ जाने की आज्ञा प्रदान कर दी । दच्छकुमारी जी ने जब पिता के जग्य में भगवान शिव का अपमान हुआ देखा तो उनसे सहन न हो सका और उन्होंने योगाग्नि से अपना शरीर जलाकर जग्य को विध्वन्स कर दिया । भगवान शंकर को जब यह ज्ञात हुआ तो वे वहां पहुँचे और दच्छकुमारी के अधजलित शरीर को अपने कन्धों पर लेकर अपने निवास–स्थान चले । रास्ते में १६–१७ स्थान पर श्री मां जी के शरीर के जलते हुये टुकड़े गिर गये ।

वे सभी स्थल जहां जगत-जननी भगवान शंकर की प्रिया दच्छकुमारी जी के शरीरांश गिरे हैं "शक्तिपीठ" के नाम से विख्यात है । और भगवान शंकर का वरदान है कि जो इन स्थानों में जिस कामना के साथ साधना करेगा, उसकी वह कामना अवश्य पूर्ण होगी ।

वह स्थान जहां लोक हितार्थ पूर्ण योगिराज और सिद्धपुरुष कुछ समय तक अपना

निवास-स्थान बनाते हैं उनकी शक्ति से पूर्ण-रूपेण आच्छादित हो जाता है और यदि वे ज्यादे समय तक अपना निवास-स्थान बनालें तो उस स्थल की बात ही अलग है। ऐसे स्थान सब प्रकार की सिद्धियों से परिपूर्ण होते हैं और उस स्थान पर किसी कामना को ध्येय बनाकर की गयी साधना, तपस्या या सेवा कदापि व्यर्थ नहीं जाती। इसी प्रकार के पुण्य स्थल "सिद्धपीठ" के नाम से पुकारे जाते हैं। अपना योग साधना केन्द्र श्री ऋषिकेश का योगाश्रम और श्री सिद्ध गुफा सवांई का योग प्रशिक्षण केन्द्र इसी श्रेणी के सिद्धपीठ में आते हैं। श्री प्रभुजी द्वारा लिखित पुस्तक "सवांई के चमत्कारिक चरित्र" में 'कृपा की चवन्नी' नामक शीर्षक में एक सत्य घटना का वर्णन है जिसको यहां प्रस्तुत करना उचित होगा। प्रसंग इस प्रकार है कि ठा० जौहरीसिंह का श्री महाप्रभु के चरणारविन्दों में अनन्य प्रेम था और वे नियम से श्री चरणों में आकर प्रणाम किया करते थे, और छोटी-मोटी सेवा किया करते थे, आश्रम की। परन्तु अर्थाभाव के कारण घर में बराबर क्लेश बना रहता था। परन्तु महाप्रभु के सामने प्रार्थना करने का साहस भी नहीं होता था। कुटुम्ब पालन का कोई उपाय समझ में उन्हें नहीं आ रहा था। एक दिन कृपानाथ श्री महाप्रभु जी स्वयं रीझे और उन्हें आवाज देकर बुलाया और बोले "जौहरीसिंह चिन्ता मत करो। यह चवन्नी ले जाओ, तुम्हारे सब कार्य यह कर देगी।" श्री जौहरीसिंह उस चवन्नी को पाकर निहाल हो गये। आज तक उनका घर सभी प्रकार से परिपूर्ण है। यह था श्री सिद्धपीठ में की गयी सेवा का फल।

इस प्रकार के अनेकानेक उदाहरण इन सिद्धपीठों की सेवा और साधना से सम्बन्धित हैं, जो वहां जाने वाले पुण्य-आत्माओं के साथ घटित हुआ है।

:o:

❀ चरित्र का स्वरूप ❀

चरित्र का एक मुख्य तत्व कर्त्तव्य पालन है। माता पिता के प्रति, भाई बन्धु के प्रति, देश के प्रति कर्त्तव्य पूरा करने में निर्बलता नहीं होनी चाहिये। कर्त्तव्य मौन भाव से पूरा करो। इसे प्रकट मत करो। कर्त्तव्य का मार्ग निराशा, कठिनाई, दुःख और संघर्ष से भरा होता है। इन कठिनाइयों से जूझने में ही चरित्र की परीक्षा होती है। चरित्र विपत्तियों की अभेद्य दीवारों में से भी मार्ग बना लेता है। चरित्र का निर्माण तो विश्व के भीषण कोलाहल में होता है। यम-नियमों का सतत पालन करना चरित्र का निर्माण करना होता है।

—वेदवाणी से साभार

कर्माशय मीमांसा

❀ आचार्य श्री चन्द्रहास शर्मा एम० ए० एम० एड०

जिस प्रकार कैमरे की रील पर बाह्य प्रकाश के माध्यम से चित्रों का प्रतिबिम्ब बनता है उसी प्रकार चित्तमें क्लिष्ट-अक्लिष्ट वृत्तियों के द्वारा प्रकृति के गुण-कर्म और स्वभाव के अनुभव रूपी चित्र अनेक जन्मों से बनते चले आ रहे हैं। जैसे बीज से अंकुर उत्पन्न होकर वृक्ष और पुनः बीज बनते हैं। उसी प्रकार वासना तथा चित्त-वृत्तियों के उपभोग से कर्माशय तैयार होते रहते हैं। कर्माशय के प्रभाव से सुख-दुःख देने वाले पुण्य अपुण्य कर्म और उनके विपाक बनते और भोग में आते रहते हैं। योगशास्त्र के सिद्धान्त के अनुसार क्लेश कर्मों के बीच-बीच में अक्लिष्ट कर्म और अक्लिष्ट कर्मों के बीच में क्लिष्ट कर्म चलते रहते हैं। जिस प्रकार के कर्म एक स्थान पर इकट्ठे हो जाते हैं उस प्रकार के कर्मों को समूह (Birds of the same feather flock together) अर्थात् समान जातीय संस्कार वृत्तियों के द्वारा उसी प्रकार के कर्मभोग का काल चल पड़ता है। यज्ञ, दान, तप जैसे पुण्य कर्मों तथा निष्काम परोपकार आदि कर्मों के फलस्वरूप जीवात्मा को सत्य, दया, परोपकार, विद्या, ऐश्वर्य आदि गुणों से युक्त परिवार में उसका जन्म हो जाता है। उस परिवार में यदि सतोगुणी वृत्तियों को बढ़ाने वाला आहार-विहार तथा स्वाध्याय भी यदि मिल जाय तो अविद्या-जन्य क्लेश कर्मों को काटने वाली बुद्धि-वृत्ति के द्वारा ऐसे कर्मों का प्रचय होता है। जो विवेक ख्याति की ओर साधक को शीघ्रता से ले जाने में मदद करते हैं। वृत्तियों का प्रवाह जब तक निःशेष नहीं हो जाता तब तक पुण्य कर्म क्लेश कर्मों को काटने के लिए चलते रहते हैं। जब क्लेश कर्म सर्वथा क्षीण हो जाते हैं तो कर्माशय में पुण्य कर्मों का प्रवाह स्वर्ग आदि लोकों के सुखोपभोग, ऋद्धियों-सिद्धियों तथा अजर-अमर रूप ऐश्वर्य लाभ के रूप में चल पड़ता है तथा 'क्षीणे पुण्ये मर्त्यं लोकम् विशन्ति' के अनुसार जीव फिर पाप-पंक की वृत्तियों से आकृष्ट होकर संसार-चक्र में घूमने लगता है। जब पुण्य कर्म भी संस्कार शेष होकर चित्त की वृत्तियां निरुद्ध हो जाती हैं और 'आत्मन्येव आत्मा तुष्टः' से साधक भर जाता है तब प्रकृति और पुरुष का संयोग जो अब तक दुःख दे रहा था और दृष्ट जन्म वेदनीय तथा अदृष्ट जन्म वेदनीय कर्माशय को

तैयार कर रहा था वह भी योगाग्नि से भस्म हो जाता है। तब साधक पर-वैराग्य—

कहिय तात तो परम विरागी।
तृण सम सिद्धि तीन गुण त्यागी॥

के बल से धर्म-मेघ समाधि में प्रवेश करता है जहाँ गीता में प्रतिपादित समत्व योग, अनासक्ति योग तथा नैष्कर्म-सिद्धि की यह दशा प्राप्त होती है—नैव किञ्चित करोमि इति मन्येत् तत्व वित्— अर्थात् आत्म-तत्व को जानने वाला लोक व्यवहार करता हुआ भी अकर्त्ता बना रहता है। उसके कर्म बन्धन के कारण नहीं बनते।

कर्म से छूटने के लिए भी कर्म की आवश्यकता है। विचार-रहित होने के लिए भी विचार की आवश्यकता पड़ती है। कुछ प्राप्त करने के लिए जो है उसे छोड़ना पड़ता है। साधना का यह विरोधाभास आसानी से समझ में नहीं आता। योग-निष्ठ जीवन के द्वारा जब ध्यानयोग में साधक अपने संस्कारों को देखने की योग्यता प्राप्त कर लेता है तब अपने जन्मान्तर के संस्कारों को देखकर उनके कारण भूत कर्मों का भी ज्ञान प्राप्त कर लेता है। कर्मों के प्रवाह से दिग्भ्रमित होकर अविवेकी पुरुष अपने प्रारब्ध और नियति को स्वीकार कर भाग्य भरोसे कर्म भोग को भोगने में ही अपनी इति कर्त्तव्यता मान लेता है। किन्तु योगी कर्म मीमांसा के रहस्य को समझ कर प्रारब्ध को चुनौती देने वाला बन जाता है। साधक पहले स्थूल क्लेशों की वृत्तियों को तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणिधान रूप क्रिया-योग के द्वारा सूक्ष्म बनाकर ध्यान के द्वारा गुणों की अधिकार सीमा का साक्षात्कार करता हुआ ज्योतिर्मय पुरुष का साक्षात्कार करके ज्ञानाग्नि के द्वारा कर्मों के बीजों को जला डालता है जिससे वे पुनः जन्म-मरण रूपी अंकुरों को पैदा नहीं करते। जैसे रंगरेज पहले वस्त्रों की गन्दगी दूर करके फिर किसी रंग में रंगता है उसी प्रकार योगी इन्द्रियों को वाह्य विषयों से रोक कर चेतन आत्मा की ओर अभिमुख करके आत्म-स्वरूप में स्थित हो जाता है।

लोभ, मोह और क्रोध से पुण्य पाप रूपी कर्माशय उत्पन्न होता है। सुख रूप में प्रतीत होने वाली वस्तुयें भी परिणाम में दुःख ही देती हैं जैसे सुस्वादु पदार्थ खाने में बहुत आनन्द देते हैं पर परिणाम में थोड़ी सी असावधानी होने पर वे नाना प्रकार के रोग पैदा कर दुखदायी सिद्ध होते हैं। अतः विवेकी पुरुष सुख में भी दुःख के दर्शन करते हैं और दुःख की जड़ की तलाश करने लगते है। दुःख का मूल कर्माशय ही है। इसी कर्माशय में कर्मों का तीन प्रकार का कार्य चलता रहता है। उसी के आधार पर तीन प्रकार के कर्म

माने गये हैं। पहले क्रियमाण—जो हम वर्तमान में कर रहे हैं और भविष्य में अपना फल देने की सामर्थ्य वाले होंगे। दूसरे संचित—जिन्हें हम भूतकाल में कर आये है और (Fixed deposit) की तरह हमारे कर्माशय में जमा है, तीसरे प्रारब्ध कर्म—जिन्हें हम इस समय भोग रहे हैं और जिनके द्वारा प्रेरित होकर हम भविष्य के लिए कर्म इकट्ठे कर रहे है। इस प्रकार प्रारब्ध कर्म अधिक शक्तिशाली कर्म हैं क्योंकि वे ही भविष्य का कर्माशय और वर्तमान का सुख-दुख तैयार करते हैं। योग-दर्शन में भगवान पतंजलि ने कर्मों के दो विभाग किये हैं —

**क्लेशमूलः कर्माशयो
दृष्टादृष्ट जन्य वेदनीय।**

क्लेश मूलक कर्माशय वर्तमान और भविष्यत् काल में फल देने के कारण दो प्रकार का है, उसी के विपाक से कीट, पशु, मनुष्य आदि जाति तथा कर्म योग का समय अर्थात् आयु तथा भोग की सामग्री प्राप्त होती है। भगवान व्यास ने इस सूत्र के भाष्य में तीन प्रकार के विकल्पों के द्वारा कर्माशय-मीमांसा पर प्रकाश डाला है। पहला—एक कर्म द्वारा जीव को एक जन्म की प्राप्ति होती है। दूसरा एक कर्म उसके अनेक जन्मों का कारण है अथवा अनेक कर्मों द्वारा उसे एक जन्म प्राप्त होता है। यदि पहला पक्ष माना जाय तो एक जन्म में अनेकों कर्म होते रहते हैं, अतः एक जन्म ही जीव के अनेक जन्मों का कारण हो जायेगा। फिर उन जन्मों में भी अनेकों कर्म होंगे। इस प्रकार उसके जन्म-मरण का कभी अन्त नहीं होगा। जब एक कर्म द्वारा ही एक जन्म की व्यवस्था नहीं बनती तो एक कर्म से अनेक जन्म कैसे सम्भव हो सकते हैं, अतः दूसरा पक्ष भी ठीक नहीं है। तीसरे पक्ष का सिद्धान्त अधिक तर्क-संगत है। वर्तमान जन्म और पूर्व जन्मों की कर्मराशि में से जो कर्म अपना फल देने को तैयार होते हैं, वे सब मिल कर एक जन्म तैयार करते हैं। जिस प्रकार मधुमक्खी के छत्ते में एक रानी मक्खी होती है, उसके उड़ जाने पर अन्य मक्खियां भी उसके पीछे उड़ जाती हैं, उसी प्रकार प्रबल कर्म के साथ उसकी समान जाति के अन्य कर्म भी संयुक्त होकर जीव को उसी प्रकार का जन्म लेने में सहायक होते हैं।

अगले जन्म की जाति का निश्चय मरणोत्तर काल की मरण दशा को देखकर किया जा सकता है। भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में इसका संकेत इस श्लोक से किया है—

**यं यं वापि स्मरन्भावम्
त्यजत्यन्ते कलेवरम्।
तं तमेवैति कौन्तेय
सदा तद्भावभावितः॥**

अर्थात् जिस-जिस भाव का स्मरण करता हुआ जीव शरीर छोड़ता है, उसी भाव के वशीभूत होकर 'एक भविक' कर्माशय के सिद्धान्तानुसार वह जीव पुण्य या पाप के बल से अगला जन्म प्राप्त करता है तथा उसी प्रकार के जन्म के अनुसार उसे कर्म और भोग भी प्राप्त होते हैं। जैसे जड़ भरत को, आश्रम में पले हुए मृग के बच्चे का, मरते समय ध्यान होने के कारण मृग की योनि प्राप्त हुई और मृग के अनुरूप घास-पात आदि भोग सामग्री भी मिली। जो पुण्य कर्म और ध्यान-परायण भाग्यशाली लोग होते हैं उन्हें मृत्यु के समय पूर्ण होश और ज्ञान बना रहता है तथा भविष्य के सुन्दर जन्म का उपाय करने की सामर्थ्य और बुद्धि बनी रहती है। जो अपने जीवन में सतोगुण को जितना अधिक बढ़ा लेते हैं, वे उतने ही अच्छे लोक तथा योनि में जन्म प्राप्त करते हैं जैसा कि गीता में प्रतिपादित किया गया है—

ऊर्ध्वं गच्छन्ति सत्त्वस्था:
मध्ये तिष्ठन्ति राजसाः।
जघन्य गुण वृत्तिस्था:
अधोगच्छन्ति तामसाः॥

अर्थात् सतोगुण में स्थित होकर जो देह त्याग करते हैं वे तप: जन: सत्य आदि ऊर्ध्व लोकों एवं मनुष्य देव, गन्धर्व आदि योनियों को प्राप्त करते हैं और जो रजोगुण में स्थित होकर देह त्याग करते हैं, वे भू भुवः आदि मध्य लोकों के प्राणी बनते हैं और तदनुरूप ही उनको भोग सामग्री उपलब्ध होती है। जो तामसी भाव में स्थित होकर जड़ता, अज्ञान, दुख, शोक, रोग से ग्रसित होकर देह त्याग करते हैं, वे रसातल आदि के जीवों में जन्म लेते हैं। इसलिए भगवान श्रीकृष्ण ने आदेश दिया—

अन्तकाले च मामेव
स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम्।
यः प्रयाति स मद्भावं
याति नास्त्यत्र संशयः॥
(८/५)

अर्थात् मृत्युकाल में जो भगवान का स्मरण कर देह त्याग करता है वह भगवत् भाव की प्रबलता के कारण परम भागवत कुल में जन्म लेता है और वहाँ उसे सतोगुणी परिकर उपलब्ध हो जाता है। उसके संयोग से वह आगे की साधनामें जन्म लेते ही प्रवृत्त हो जाता है।

योग ही एक ऐसी विद्या है जिसके द्वारा व्यक्ति अपना वर्तमान और भविष्य दोनों ही अपनी इच्छानुसार बना सकता है। प्रारब्धवश उसे जैसा जन्म, परिवार विद्या आदि मिला, उसे मीरा, तुलसी, रैदास, नरसी आदि की तरह तीव्र साधना के द्वारा बदल सकता है। कबीर ने अगर प्रारब्ध को स्वीकार कर

लिया होता तो वे जुलाहे मात्र ही बनकर रह गये होते। ज्ञान विज्ञान धर्म आदि के क्षेत्र में जितने भी महान लोग हुए हैं उन्होंने अपने प्रारब्ध को बदल कर यह गौरव पाया है। महाभारत में कर्ण की यह उक्ति "दैवायत्तं मज्जन्म मदाधीनं मे पौरुषम्." अर्थात् मेरे प्रारब्ध कर्मों और देव को कृपा के परिणाम स्वरूप मेरा सूत कुल में पालन-पोषण हुआ किन्तु मैंने भगवान सूर्य की उपासना और तप के द्वारा अपने भाग्य लिखे को पलट दिया है जिसे मेरे पराक्रम का सभी लोहा मानते हैं इसी सिद्धान्त की पुष्टि करती है। योग सूत्र में एक सूत्र है —

तीव्र संवेगानाम् आसन्नः ।

जिसका अभिप्राय है कि अनवरत और तीव्र संकल्पपूर्वक किये गये कर्मों का फल इसी जन्म में उपस्थित हो जाता है। तीव्र संवेग से किये गये कर्मों में कौन-कौन से कर्म शीघ्रफल देते हैं, उसका निरूपण भगवान व्यास ने अपने भाष्य में इस प्रकार किया है—

तत्र तीव्र संवेगेन मंत्रतपः समाधिभिर्निर्वर्तित ईश्वर देवता महर्षि महानुभावानामाराधनाद्वा यः परिनिष्पन्नः स सद्यः परिपच्यते पुण्यकर्माशय इति। यथा तीव्र क्लेशेन भीतव्याधित कृपणेषु विश्वासोपगतेषु वा महानुभावेषु वा तपस्विषु कृतः पुनःपुनरपकारः स चापि पापकर्माशय सद्य एव परिपच्यते।

तीव्र संवेग से यदि गुरु प्रदत्त मन्त्र का जप किया जाय तथा देवता ब्राह्मण, गुरुदेव एवं विद्वानों की निष्कपट हृदय से अपने सुखों को छोड़ कर सेवा-पूजन की जाय साथ ही शरीर शुद्धि, सत्य, हितकारी वाणी का प्रयोग और मनसा-वाचा-कर्मणा सरल व्यवहार, सर्दी-गर्मी, भूख-प्यास, हानि-लाभ, आदि जीवन में आने वाले द्वन्द्वों को हँसते-हँसते सहना तथा ब्रह्मचर्य और अहिंसाव्रत का पालन किया जाय तो यह तप कहलाता है। ईश्वर की विभूति मानकर निष्ठा-पूर्वक तपों का अनुष्ठान किया जाय तथा ध्यान और समाधि में प्रभु के और गुरुदेव के मन में मन, चित्त में चित्त, बुद्धि में बुद्धि एक रूप करने का अभ्यास किया जाय तो बड़ी शक्ति छोटी शक्ति को अपने में मिला लेती है, इस नियम के अनुसार परम गुरु ईश्वर-स्वाध्याय से प्रसन्न होकर योगी के स्थूल कर्मों को सूक्ष्म और सूक्ष्म कर्मों को बीज-भाव में बदल कर कर्माशय दूर से खींचकर एक साथ उपस्थित कर देते हैं जिससे एक ही भोगमें अनेकों कर्म भुक्त होकर क्षीण हो जाते हैं। जैसे एक ही औषधि से ज्वर भी उतर जाय और दस्त भी बन्द हो जाते हैं। प्रायः देखा जाता है कि योग ध्यान-परायण साधकों के जीवन में क्लिष्ट कर्मों का

कर्माशय रोग, शोक, विपत्ति, के रूप में बहुत आता है जिसको देखकर सामान्य व्यक्ति तर्क करता है कि प्रभु की भक्ति करने से क्या फायदा जब दुःख, दर्द पहले से भी अधिक भोगने पड़ रहे हैं। किन्तु योगी यह जानता है कि जो क्लेश कर्म उसको अनेक जन्मों में सताते वे गुरुदेव की कृपा से जल्दी से मुक्त हो गये हैं और उसका मार्ग निष्कंटक बन रहा है। कुछ कर्म ऐसे भी हैं जो भोगने भी नहीं पड़ते और शीघ्र उनसे निष्कृति हो जाती है। ऐसे कर्म पुण्य कर्माशय के प्रभाव से ही प्रभावहीन हो जाते हैं। बहुधा देखने में आया करता है कि कोई नौका-दुर्घटना या यान-दुर्घटना हुई, उसमें आश्चर्य रूप से कोई भाग्यशाली बेदाग बच निकलता है। तब लोग प्रायः कहते हैं कि इसका कोई बहुत बड़ा पुण्य था जो इसके आड़े आ गया जिससे उसकी रक्षा हो गई। महान पुण्य का संचय करने का मन्त्र, तप, समाधि के अतिरिक्त दूसरा तरीका है—ईश्वर, देवता, महर्षि तथा सिद्ध-पुरुषों की आराधना। इनके आशीर्वाद से दुखों के बादल बिना बरसे ही उसी प्रकार तितर-बितर हो जाते हैं जैसे कि तीव्र हवा के झोंके से घटायें छिन्न-भिन्न हो जाती हैं। सिद्धों की वाणी अमोघ होती है। वे यदि किसी पापात्मा को पुण्यात्मा होने का आशीर्वाद दे दें तो उसके पुण्यात्मा होने में देर नहीं लगती। प्रभुजी के आशीर्वाद से पाप-कर्म-प्रवृत्ता रामरती दूसरे क्षण ही परम तपस्विनी परम योगिनी रामरती बन गई थी।

जिस प्रकार पुण्य कर्मों से पुण्य कर्माशय तैयार होता है, उसी प्रकार तीव्रतम पाप-कर्मों से इसी जन्म में फल देने वाला पाप कर्माशय भी तैयार होता है। यदि निरपराध की कोई तीव्र क्लेश से हत्या करता है या डर कर शरणमें आये हुए की रक्षा करने के स्थान पर हानि करता है, रोग से पीड़ित व्यक्ति की समुचित सेवा सुश्रुषा नहीं करता जिससे उसकी मृत्यु हो जाती है अथवा किसी की प्यारी वस्तु को कोई छीन लेता है अथवा किसी को विश्वास देकर उसकी हत्या कर देता है या किसी सिद्ध पुरुष तथा तपस्वी का अपने किसी कार्य द्वारा जाने या अनजाने अप-मान करता है तो उससे भी पाप कर्माशय तैयार होता और उसका इसी जन्म में फल मिल जाता है, क्योंकि जिस प्रकार महापुरुषों का आशीर्वाद फलदायी होता है उसी प्रकार उनका शाप भी फल देता है। पुण्य कर्माशय जो तीव्र संवेगी पुण्य कर्मों से तैयार होता है उसका फल सुख शान्ति और आनन्द है। ध्यान देने की बात यह है कि अपने प्रारब्ध को यौगिक उपायों द्वारा इस प्रकार बदलने की सामर्थ्य कि उसके कर्म इसी जन्म में फलित होते दिखाई पड़े, मनुष्य से अतिरिक्त

अन्य किसी योनि के प्राणियों में नहीं है क्योंकि मनुष्य योनि ही एक ऐसी योनि है जिसमें कर्म करने की स्वतन्त्रता है। अन्य सभी योनियां यहां तक कि देव योनि भी भोग योनि है।

योग मार्ग का पथिक वर्तमान और भविष्य दोनों को बनाने की सामर्थ्य रखता है। यदि समाधि-निष्ठा के द्वारा कर्मों को बिल्कुल जला दिया या कर्मयोग के द्वारा धान से छिलका उतार कर चावल की तरह कर्मों को शुक्ल और कृष्ण तथा दोनों के मिले-जुले रूप से भिन्न व पाप-पुण्य से रहित शरीर रक्षा के निमित्त कामना-रहित निष्काम-कर्म के रूप में परिणित कर दिया तो भी कर्माशय तैयार नहीं होता। कुम्हार के चक्र की तरह संस्कार-वश सुचालित क्रियायें निर्बीज समाधि प्राप्ति पर्यन्त होती रहती हैं। योगी के कर्मों के विषय में योग सूत्र के चतुर्थ पाद के सप्तम सूत्र में संकेत है—

कर्माशुक्लाकृष्णं योगिन-
स्त्रिविधमितरेषाम् ।

अर्थात् संसारी लोगों के कर्म तीन प्रकार के होते हैं—पापकर्म, पुण्यकर्म और पाप-पुण्य मिले-जुले। योगी के कर्म इन तीनों से भिन्न चौथे प्रकार के होते हैं। जिन्होंने अपने तीव्र स्वाध्याय, तीव्र तप और तीव्र समाधि तथा महापुरुषों की सेवा-आराधना के द्वारा अपने क्लेश क्षीण कर लिये हैं उनका भविष्यत कालीन कर्माशय नहीं बनता और अकर्ता, अभोक्ता और द्रष्टा बन जाते हैं मनुष्य योनि में आकर कर्म करने का स्वर्ण अवसर प्राप्त हुआ है उसका उपयोग करते हुए हमें भगवान श्रीकृष्णचन्द्र के इस आदेश का पालन करना चाहिए—

तस्मादसक्तः सततं
कार्यं कर्म समाचर ।
असक्तो ह्याचरन कर्म
परमाप्नोति पूरुषः ॥

(गीता ३/१९)

अर्थात् आसक्ति रहित होकर निरन्तर अपने कर्त्तव्य कर्मों को करते रहो क्योंकि अनासक्त कर्मों के द्वारा ही परमात्म दर्शन होते हैं।

योगस्य प्रथमं द्वारं वा-ङ्निरोधोऽपरिग्रहः ।
निराशा च निरीहा च नित्यं एकांतशीलता ॥

योग का प्रथम द्वार है—वाणी का नियमन, अपरिग्रह, आशा न रखना, अपेक्षा, इच्छा न रखना और रोज थोड़ी देर एकांत में रहना। —श्री शंकराचार्य

पत्रम्-पुष्पम्-फलम्-तोयम्

यस्य सर्वे समारम्भाः कामसंकल्पवर्जिताः ।
ज्ञानाग्निदग्धकर्माणं तमाहुः पण्डितं बुधाः ॥

जिसके समारम्भ कामनाओं से संयोजित नहीं होते और जिसके कर्म ज्ञानाग्नि में तप कर शुद्ध हो गये हैं, उसे ही सत्य का साक्षात्कार हुआ है, ऐसा ज्ञानी जन कहते हैं ।

× × × ×

यदृच्छालाभसंतुष्टो द्वन्द्वातीतो विमत्सरः ।
समः सिद्धावसिद्धौ च कृत्वाऽपि न निबद्ध्यते ॥

जो यथालाभ से सन्तुष्ट रहता है, जो सुख-दुःखादि द्वन्द्वों से मुक्त हो गया है, जो द्वेष रहित हो गया है, जो सफलता-असफलता में तटस्थ है, वह कर्म करता हुआ भी बन्धन में नहीं पड़ता ।

× × × ×

यज्ञशिष्टामृतभुजो यान्ति ब्रह्म सनातनम् ।
नायं लोकोऽस्त्ययज्ञस्य कुतोऽन्यः कुरुसत्तम ॥

यज्ञ से बचा हुआ हविष्य अमरत्व प्रदान करता है । उसे खाने वाले सनातन ब्रह्म को पाते हैं । यज्ञ न करने वाला इसी लोक में कुछ नहीं पाता, फिर परलोक की तो बात ही क्या ?

× × × ×

एवं बहुविधा यज्ञा वितता ब्रह्मणो मुखे ।
कर्मजान्विद्धि तान्सर्वानेवं ज्ञात्वा विमोक्ष्यसे ॥

इस प्रकार वेदों में अनेक प्रकार के यज्ञों का वर्णन हुआ है । इन सबको कर्म से उत्पन्न हुआ जान । इस प्रकार सबको जानकर तू मोक्ष पायगा ।

श्रेयान्द्रव्यमयाद्यज्ञाज्ज्ञानयज्ञः परन्तप ।
सर्वं कर्माखिलं पार्थ ज्ञाने परिसमाप्यते ॥

अनेक प्रकार के द्रव्यों से किये जाने वाले यज्ञ की अपेक्षा ज्ञान-यज्ञ अधिक श्रेयस्कर है, क्योंकि सब विहित कर्मों की पूर्ण सफलता सच्चे ज्ञान की प्राप्ति में ही निहित है।

× × × ×

यथैधांसि समिद्धोऽग्निर्भस्मसात्कुरुतेऽर्जुन ।
ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि भस्मसात्कुरुते तथा ॥

जैसे प्रज्वलित अग्नि ईंधन को भस्म कर देती है, वैसे ही ज्ञानरूपी अग्नि सब कर्मों को भस्म कर देती है।

× × × ×

न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते ।
तत्स्वयं योगसंसिद्धः कालेनात्मनि विन्दति ॥

इस संसार में ज्ञानके समान शुद्ध करने वाला दूसरा कुछ नहीं है। जो निःस्वार्थ कर्म में अपना अभ्यास पूर्ण कर लेता है, वह यथा समय उस ज्ञान को अपने आप में प्राप्त करता है।

× × × ×

योगसंन्यस्तकर्माणं ज्ञानसंछिन्नसंशयम् ।
आत्मवन्तं न कर्माणि निबध्नन्ति धनंजय ॥

जो मनुष्य त्याग-भाव से कर्म करता है, जिसने ज्ञान के द्वारा संशय को छिन्न कर डाला है और जो सर्वत्र अपने आत्मा के प्रति जागृत रहता है, उसे कर्म नहीं बांधते।

× × × ×

तस्मादज्ञानसम्भूतं हृत्स्थं ज्ञानासिनाऽऽत्मनः ।
छित्त्वैनं संशयं योगमातिष्ठोत्तिष्ठ भारत ॥

इसलिए ज्ञानरूपी खड्ग से अपने हृदय से इस अज्ञान-जन्य संशय को नष्ट कर और योग में स्थिर होकर खड़ा हो जा।

मूल्य समाप्ति की सूचना तथा—

❀ नये वर्ष का मूल्य भेजने का आग्रह ❀

'सिद्धयोग' का प्रस्तुत अङ्क मार्च सन् ८१ का अङ्क है। इसके पहुँचने पर सभी ग्राहक बन्धुओं का तेरहवें वर्ष का मूल्य जो कार्यालय में जमा कराया गया था समाप्त हो जाता है। अतः नवीन चौदहवें वर्ष का मूल्य अठारह रुपए सभी कृपालु ग्राहकों को हमें मनीआर्डर द्वारा भेज देना चाहिए या कार्यालय में स्वयं अथवा अपने किसी प्रतिनिधि द्वारा भेजकर रसीद प्राप्त कर लेनी चाहिए।

सदा की भांति इस वर्ष भी अप्रैल का प्रथम अङ्क नये वर्ष के विशेषांक के रूप में अनेक भावपूर्ण चित्रों और उपयोगी लेखों तथा कविताओं के सहित प्रकाशित किया जा रहा है। कागज आदि की दुर्लभता के कारण विशेषांक सीमित संख्या में ही छापा जा रहा है, अतः वी० पी० की अपेक्षा न करके सभी ग्राहकों को अपना मूल्य मनीआर्डर द्वारा ही प्रेषित करने में शीघ्रता करनी चाहिए ताकि 'सिद्धयोग' का यह उपयोगी विशेषांक उन्हें समय पर ही सुलभ हो सके।

'सिद्धयोग' हिन्दी मासिक (पत्रिका) का विवरण

फार्म नं० ४ नियम ८ के अन्तर्गत

१. प्रकाशन का स्थान—	श्री सिद्धगुफा सर्वाई, आगरा (उ० प्र०)
२. प्रकाशन का अवधिक्रम—	मासिक
३. मुद्रक का नाम—	देवीप्रसाद शर्मा 'दिव्य'
राष्ट्रीयता—	भारतीय
पता—	कर्मयोग प्रिंटिंग प्रेस, बसई कलां, ताजगंज आगरा-१
४. प्रकाशक का नाम—	सिद्धगुफा प्रकाशन
राष्ट्रीयता—	भारतीय
पता—	श्री सिद्धगुफा योग-प्रशिक्षण केन्द्र सर्वाई आगरा
५. सम्पादक का नाम—	योगयोगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज
राष्ट्रीयता—	भारतीय
पता—	श्री सिद्धगुफा सर्वाई, आगरा
६. स्वत्वाधिकारी—	अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज।

मैं देवीप्रसाद शर्मा 'दिव्य' यह घोषित करता हूँ कि उपर्युक्त विवरण मेरी अधिकतम जानकारी और विश्वास के अनुसार सत्य है।

कृते सिद्धगुफा प्रकाशन
देवीप्रसाद शर्मा 'दिव्य'
प्रकाशक

२८ २-८१

SIDHAYOGA Regd. No. L. AG. 08

योग के सिद्धान्त और शिक्षाओं का प्रतिपादक मासिक

सिद्ध योग

संस्थापक संपादक तथा संरक्षक:
योगिराज अनंत श्री चन्द्रमोहन जी महाराज

❋ श्रद्धा विश्वास तथा दया ❋

श्रद्धा, विश्वास तथा दया—ये धर्म की सारभूत त्रिपुटी है, इसके सेवन से हमारा जीवन भगवत्सकल्पमय हो जाता है और इसके अतिरिक्त जो कुछ बच रहता है, उसका कोई महत्त्व नहीं। हां, उसको हम श्रद्धा एवं दया से अभिभूत कर अपने लक्ष्य की प्राप्ति में प्रयुक्त कर सकते हैं। श्रद्धा के सामने सब कुछ सम्भव है, विश्वास कठिन को सुगम बनाता है और प्रेम तो उसे सुगमतर बना देता है। और जो इन तीनों सद्गुणों का दृढ़तापूर्वक अभ्यास करता है उनके लिये तो कहना ही क्या, समस्त मार्ग कण्टक-हीन होकर उसका स्वागत करता है।

卐 卐 卐

मुद्रक—देवीप्रसाद शर्मा 'दिव्य' कर्मयोग प्रिंटिंग प्रेस, बसई कलां, ताजगंज, आगरा-१ फोन ६३१६८